ॐ

# अनुभवप्रकाश ।

जीवोद्धारनिमित्त, योधपुरमध्यधृतस्वात्मप्रादुर्भाव
श्रीमहायोगेश्वरः श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य
श्री १०८ श्रीवनानाथजी महाराजविरचित ।

जिसको
श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य आत्मनिष्ठ
गुणरत्नसिंधु उक्त महाराजके शिष्यवरिष्ठ
श्रीनवलनाथजी महाराजके शिष्य
उत्तमनाथजीने स्वरचित कुछ
शब्दोंको सम्मेलन करके द्वितीया-
वृत्ति संशोधन किया ।

जिसको
सत्यजिज्ञासु जनोंके उपकारार्थ श्रीमहाराजके
शिष्योंने अपने व्ययसे


बंबई
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालयमें
छपाकर प्रकाशित किया ।

संवत १९८४, शके १८४९.

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लेन निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें छापी और श्रीनरहरनाथजीके मुख्य शिष्य श्रीउत्तमनाथजीने बम्बईमें प्रकाशित की.

## (२) अनुभवप्रकाशके रागआदिकोंकी अनुक्रमणिका



इति रागआदि अनुक्रमणिका समाप्त ।

# अनुभवप्रकाशकी–पदअनुक्रमणिका।

## अथ अनुभवप्रकाशके राग आदिकोंकी अनुक्रमणिका ।

## (२) अनुभवप्रकाशके रागआदिकोंकी अनुक्रमणिका



इति रागआदि अनुक्रमणिका समाप्त।

# अनुभवप्रकाशकी-पदअनुक्रमणिका।

| पद, | पृष्ठाङ्क. |
|---|---|
| दोखपरे ख्यालीदोखपरे ... | ६४ |
| लख चेतनता रहोजी ... | ६५ |
| चेतनसबइच्छमेंखेलदेखाया ... | ६५ |
| साधोभाईज्ञानअज्ञानवताई ... | ६६ |
| साधोभाईआतमज्ञानीजोई ... | ६७ |
| साधोभाईयहनिरणासुखदाई ... | ६७ |
| साधोभाईनहींअंदरनहींबारा ... | ६८ |
| साधोभाईआतमअखेअनासी ... | ६८ |
| साधोभाईसतगुरुखेलरचाया ... | ६९ |
| साधोभाईप्रगटवचनपुकारूं ... | ६९ |
| संमझगुरुज्ञानकीवार्ता ... | ७० |
| ऐसीविधिजगतवागफूला ... | ७० |
| ऐसीगुरुसेंनदीवीहमकूं ... | ७१ |
| तत्त्वमसिअर्थकोज्ञाता ... | ७१ |
| फकीरीमहासूरनकीसूर ... | ७२ |
| फकीरीरहतनिचिंतसुदेस ... | ७२ |
| फकीरीनिश्चलपदअज्ञाद ... | ७३ |
| फकीरीयहेंनिजपरमविवेक ... | ७३ |
| फकीरीब्रह्मज्ञानसोईज्ञान ... | ७४ |
| फकीरीकेवलब्रह्मविचार ... | ७४ |

| पद. | पृष्ठाङ्क |
| --- | --- |
| साधोभाईआतमअचलअनइच्छा ... | ८७ |
| साधोभाईचेतनद्रष्टासोई ... | ८७ |
| ज्ञानगुरुदेवकासहीरेसाधो ... | ८८ |
| साधोभाईअपणाआपअथाया ... | ८९ |
| साधोभाईमायामेंद्वैतविलासा ... | ९० |
| समज्यांसंतपरमपदपरस्या ... | ९० |
| साधोभाईनितआतमनिरदाया ... | ९३ |
| मरैतापरमातमाज्यांकीकहूंरेनिसार्णी ... | ९३ |
| येनिश्चानिरवाणहैंनिरवाणी ... | ९४ |
| साधोभाईनितनिरगुणनिरभोई ... | ९५ |
| यासतगुरुजीरीसोजीरेसाधो ... | ९५ |
| इच्छातीनवताईरेसाधो ... | ९६ |
| सोसाधुनिजजगतमेंगंगोदकपाणी ... | ९७ |
| सुरतसुणबावरीतेरोबीतोजायवेवार ... | ९७ |
| पीयाजीकेदरसणकी ... | ९८ |
| साधोरेचितचेतनकारिया ... | ९९ |
| श्रीवनानाथजीका परवाणा. | |
| ब्रह्मगुरुसंतनकीदया-इत्यादि | १०० से १०६ |
| ... श्रीनवलनाथजीकी वाणी. | |
| फकीरीदिलविचदेवदीवाण ... | १०७ |

## योगेश्वर श्रीउत्तमनाथजीकी वाणी



इति।

ॐ

अथ

# श्रीनवलनाथेश्वरस्तोत्रप्रारम्भः।

श्रीनवलमहेशं नानावेशं चोत्तमदेशं नौमीशम् जगत्प्रकाशं निखिलावासं भवभयदारंपारेशम् ॥ गंगा शोभितजटाकलापं गगनविलासं गौरीशम् । श्रीनवलमहेशम्०॥१॥ योगीन्द्रैरभिपूजितपादं तारणकारण रामेशम्।करुणाकारं मयपुरहारं धृतसुखवासं कैलासम्॥ श्रीनवलमहेशम्०॥२॥ जयजयकृतशेषं शिवामहेशं ध्यानधरेशं भूतेशम् । विद्याऽलयकारं विश्वविकाशं काशीवारनिश्वेशम्॥ श्रीनवलमहेशम्०॥३॥परमपुनीतं त्रितिलगुणीतं वाराणसीशं तारेशम् । ब्रह्मकृतीतं भुवनगीतं तारस्वरूपं परमेशम् ॥ श्रीनवलमहेशम्० ॥४॥ द्वादशशुभलिंगः पूजितदेहमुमामहेशं योगीशम् । कुण्डलिकुण्डलभूपंगंभूपितसर्वशुभांगं ध्यानेशम् ॥ श्रीनवलमहेशम्० ५॥जगद्विचित्रं करधृतडमरू मुद्रावेशं सोमेशम्। भूतगणार्चितभूतिविभूपित मंगलकारिकृतवेपम्॥ श्रीनवलमहेशम्०॥६॥ प्रणतसुखकारं कृपाविशालं त्रिशूल-

ारं भीमेशम् ॥ भयकृद्भयनाशं धनपतिदासं मायापारं
योमेशम् ॥ श्रीनवलमहेशम्० ॥७॥ अघटितमुद्राघट-
ाकारं शोभितरूपं नृतवेशम् । विबुधविशेषं विविधसुदे-
ा परमाकारं सोंकारम् ।श्रीनवलमहेशम्०॥८॥नेत्रत्रय-
ारं शोभित मालं चन्द्रविशालं स्तुतवेशम् । नानानग-
ासं सुकृतविलासं प्रीतिनिवासं धरेशम्॥श्रीनवलमहे-
शम्० ॥ ९ ॥ गणपतिषण्मुखलालितदेहं चित्रविचित्र
भूतेशम् । वरदवरेण्यं परमावेद्यं रूपाभेद्यं सुखवेद्यम् ।
श्रीनवलमहेशम्० ॥ १० ॥ यंरंलंवंवर्णविचारं वर्ण-
सुचारं वर्णेशम् । तारणकारणमुमया सहितं लिंग-
विशेषं स्तुतवेशम्॥ श्रीनवलमहेशं नानावेशं चोत्तमदेशं
नौमीशम् ॥११॥ स्तुतिमिमां प्रयतः पठते जनो भवति
तस्य सुखं परमाद्भुतम्॥जगतिकीर्तिमनोरथवैभवं त्विह
परत्र जनस्य शिवालयम् ॥ इति श्रीनवलनाथेश्वरस्तोत्रं
समाप्तम् ॥ श्रीरस्तु । ॐ तत्सत् ।

ॐ

# अथ शंकरप्रातःस्मरणम् ।
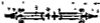
प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं
गंगाधरं वृषभवाहनमंबिकेशम् ॥
खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥१॥
प्रातर्नमामि गिरिशं गिरिजार्द्धदेहं
सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम् ॥
विश्वेश्वरं विजितविश्वमनोऽभिरामं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥२॥
प्रातर्भजामि शिवमेकमनन्तमाद्यं
वेदांतवेद्यमखिलं पुरुषं महान्तम् ॥
नामादिभेदरहितं सुखदुःखशून्यं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥ ३ ॥
श्लोकत्रयमिदं पुण्यं प्रातःकाले पठेत्तु यः ॥
स गत्वा किल कैलासं शिवेन सह मोदते ॥ ४ ॥

इति शङ्करप्रातःस्मरणम् ।

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीगुरवेनमः ॥ श्रीसच्चिदानन्दाय नमः ॥

अथ

श्रीमहायोगीश्वर श्रीमंत् श्रीवनानाथजीकृत–

# अनुभवप्रकाश ।

## राग आसावरी।

साधो भाई हरिजन हरकूं ध्याता । समझ्या संत परमपद पावें वां रै निंगे निरंजन आता ॥ टेर ॥
गवरीको नंद गणेश मनाऊं, सिवँरूं शारद माता ॥
भूलों भोम सवाई आपे सुध बुध दो गुणदाता ॥ १ ॥
सिवरयां संत सदा सुख पावे, निरमल नीर में नाता ।
पलमें पाप कटे कायाका, शील सज्यां घर आता ॥२॥
घरमें जुगत मुगत सब दरसें, कर मेहर में जसगाता ।
निग करे निरख्यो निरगुणकूं, फल अमरापुर पाता ॥३॥
पायो साम उसाँसे सिमरत, कर सिमरण समझाता ।
वनानाथ कहै सेन सतगुरुकी, परस्यां मिटे विख्याता ॥
॥४॥१॥४॥ परम गुरु धारी कुदरतपर कुरबांनी॥ आगम
सिरला जांनी सायब धारी कुदरतपर कुरबांनी ॥ टेर ॥

पलमें राव रंक कर डारे,रंक करें सुलतांनी। तोरी गति तूहीं जांणे करता, में हेरत रह्यो हैरानी ॥ १ ॥ तें गज सिंधु डूबतो तान्यो, चीर द्रोपदी रांनी। भारथमें भँवरीरा इंडा, राखलिया हर जांनी ॥ २ ॥ हरिचंद कँवर तारादे रांनी, ज्यां भरयो नीचघर पांनी। संकट दे संतसार करी जद, दरशण दिया हर आंनी ॥ ३ ॥ केताई संत हुवा धरणीपर, ज्यांरि विगत करे कवि वांनी ॥ वनानाथ कहे अर्ज हमारी, सुँण सायब निर्वानी ॥ ४ ॥ २ ॥ ८ ॥

## राग सारंग।

पार न जा तूं प्राणीलाल, देहि दिवांनी ज्याकूं दोस न दीजे पार न जा हो पार न जा ॥ टेर ॥ खड़ी खड़ी में निजर निहारूं दरद लग्यो दिन रैंण पुकारूं। ग्रहन अंदर लगरही वाव, पल पल प्यास लगी पीव तोरी ॥ १ ॥ खबर नहीं खलक मांहि तोरी, मैरम मुराद लगी दिल मोरी। दरस विना दासी दुख पाय, रातदिनां में रहुं रुतवंती ॥ २ ॥ मेहर भई मोहन घर आयो,सो पीतम नैणां दरसायो। रू हृदे वीच रचियो आय, सदकै जाऊं सुरतपर सैणां ॥ ३ ॥ सदा [illegible] श्यांम सुहायो, रहता रांम अमर वर पायो ॥ सखी मिल सारंग गाय, सुरता रहैं सदा सुखवा-

सण ॥ ४ ॥ यह विरहनके भेद बताये, जीयाराम गुरुके गुण गाये ॥ वनानाथ ओलख्यो सतभाव, संत अनेक बुहा इण सैंने ॥ ५ ॥ ३ ॥ १२ ॥

## राग सारंग।

साध होय घट सोजेलो थांनु आवा गिवण न होय समझ हालो मांजां भाइयों ॥ टेर ॥ सत्त धातरो सूवटो, बोलत अमृत बोल । भिन भिन कर समझाविया, गुरु दीयो नांम अमोल ॥ १ ॥ केइक करणी कररया, केइक रयाहै अडोल । केइ कमाई कारणें,भटक गुमावें तोल ॥ २ ॥ रत होय चालो रामसुं, तजो जगतरो नेह । इण पंथ परतक पावसो आतम अचल अदेह ॥ ३ ॥ आज्ञाकारी आगला रहें; गुरुचरणाँरी ओट । वनानाथ कहें भाइयां, तुमें बांधो, प्रेमहंदी पोट ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७ ॥

## राग।

नींदड़ली नारि बुरी ,थेंतो लियो सकल जग खाय, नींदडली नारि बुरी ॥ टेर ॥ निंदरा आई शहरमें, घर घर बूझे जाय । तीन लोकमें आई पाड़कें, साधू देवोंनी वताय ॥ १ ॥ साधू आया वारणें, क्युं कूकें नार कुनार । में अवधूता रहूं गगनमें,

तोंयं देऊं ए शब्दकी मार ॥ २ ॥ हमकूं तुम निवंली करजाणी, मेरी जात कुजात। तीन लोकमें मेरी साख पूछलो, मन जमरांणो मेरी साथ ॥ ३ ॥ सिमरण सेल शब्दका हाथे, वैठा आसण धार। आगी मत आ नारी कुलखणी, आंडी मेरे गुरूकी कार॥ ४॥

वडे वडे ऋषि मुनी वनमें, जासूं खेली राड। भजन तुमारा कोण चिकारी, लेऊं ज्ञांन कुंइ पाड ॥ ५ ॥ महीं करमण तुं कारन मांनै, निसडी बडी निराट। वंनानाथ कहे गोरख स्वांमी, निश्चै दिवी तोंयें डाट ॥ ६ ॥ ५ ॥ २३ ॥

## राग मंगल ।

सतगुरु शरणैं आय, रामगुण गाय रे। अवसर वीतो जाय पीछै, पिछताय रे ॥ १ ॥ झूल्यो नरक दुवार, मास नव वीच रे। कीना कवल [illegible]रार, विसरगयो नीच रे ॥ २ ॥ लागो लोभ अपार, [illegible]ा माँय मद छक्यो। वंध्यो वंधण अपार, नाम नहीं [illegible] ॥३॥ मायावन अंधार, मृगजल धूपरे। भटकत [illegible] कूपरे ॥ ४ ॥ मोह मुकके महल [illegible] सुद्ध स्वरूप विसारि, [illegible]यो जग मूढ़ अजांण, [illegible] विन नाम कारज कैसें

भवसागरमें धरी, मानव देह आय रे। हर सिमरण विन, जूंण पशूकी पाय रे॥ १॥ लख चौरासी जूंण, जीव भटकत फिरें। करम कमाई संजोग, मानव देह अवतरें॥ २॥ ओ जग झूठो जांण, सार सतसंग गिरो। तब पावो गुरुज्ञान, तुरत भवसिंधु तिरो॥ ३॥ छूटत सकल संताप, ताप त्रैगुण्य मिटे। पावे मोक्ष मुकांम, रहो निरभय उठै॥ ४॥ कोई वडभागी संत, सत्य मिथ्या लखें। वनानाथ कुर सार, सत्य वांणी भखें॥५॥७॥३४॥

समता सेज समाय, करम कांनें करें। भवसागर भरी भूल, ज्यांमें हंसा तिरें॥ १॥ ज्ञान ध्यान कर सार, भगत सांची गिरें। रहें गुरुमुख आधीन, जके कारज करें॥ २॥ ब्रह्म भरयो दरियाव, चूण चेतन करें। मोती चुगत विचार, मुक्ति अवदर भरें॥ ३॥ वनानाथ ब्रह्म जांण, दुःख दारिद्र हरें। हंस चल्या भव जीत, नहीं फेरा फिरें॥ ४॥ ८॥ ३८॥

प्यारी सजि सोलै सिणगार, शील सुध सुंदरी। चली चेतनकी चाल, वाणी मुखसुंदरी॥ १॥ अजब झरोखे आय, अधर आसण किया। धरणि गगन विन धांम, परख परसी पिया॥ २ सदा रहें पिव संग, रहता रंग रचरई। गरज रहीं गुरुज्ञान, मान मिलरही

प्रकृति परिवार सहित,खंडण करी। वनानाथ सुध बोध, निरमला निसपरी ॥ ४ ॥ ११ ॥ ६४ ॥

आज दिहाडो गरवा, देवरो गावां मँगलाचार॥टेर ॥ संतद्वारै चाले सखी, सज सोलै सिणगार । लघुतारा लंगर पहिरलो; धिन आजूडो दिन वार ॥ १ ॥ पांच सखी भेली हुई; मिली पचीसूं आंण । अरध उरध आसण किया, कररही पवनपिछांण ॥ २ ॥ तनकैरो दीपक करूं, वाती करूं मनसार । तेल सिंचाहूं प्रेमरो, जगियो ब्रह्मविचार ॥ ३ ॥ इडा पिंगला सोझके; सुषमण कियो निहार। रमझम करती कांमणी,आई त्रिवेणी दवार ॥ ४ ॥ दशवेंमैं दरसण भया, अनहद घुरिया निसांण । जोत झिलामिल होय रही, ये साचा सैंनांण ॥५॥ जुड़ी हथाई हर नामरी, कररह्या संत विलास । वीच विराजे गुरु आपणा, क्रोड भानु परकास ॥ ६ ॥ जीयाराम गुरु भेटिया, भागा भरम अंधार । वनानाथ चरणो रहो, नितप्रति करो दिदार ॥ ७ ॥ १२ ॥ ६१ ॥

## राग सोरठ।

जागो जुगत विचारि, रहो कमलापति। औसर आयो हाथ, हमें करलो गति ॥ टेर ॥ गरजत गगन मँझार, विजलियां चमकती । अमृत झरत

अपार, पिये कोई नर जती ॥ १ ॥ षट चक्र
छेद, चेतन चाल्या संत सती । उलट पुल
भर पीव, निकट गंगावती ॥ २ ॥ अखण्ड ज
दिनराति, लगतहै विन वती। देख्या देहीमें दीदा
जदि हुवा तिरपती ॥ ३ ॥ रहूं चरण लिपटाय, उता
गुरुरी आरती। वनानाथ कहे दास, सायब मोप
छत्रपती ॥ ४ ॥ १३ ॥ ६५ ॥

## राग खुवास चौपाई–पद ।

तुझ विन घडियन आवड़े, सतगुरु सायब सेंण
सिमरथ साचा सतगुरु अमृत आछा वेंण ॥ टेर ।
ऊभी जोऊं वाटड़ी, कर निंगे झांकत नैन। मंदि
आवो मोहणां, दासीनूँ दरसण देंन ॥ १ ॥ दरसण
विना बहु दुखी दासी, तूं सुखी राखण सेंण । विरह
करकर रही विरहणी, दरदवंती कहे वेंण ॥ २ ॥ वन वन
पुकारै विरहणी, कर लगन दिया रेंण। आयो नहीं गुरु
आपणों, अवगुण पर गुण दहण ॥ ३ ॥ वेगरज सत
गुरु रहें वेहद भावैं ऊगा भांण। वनानाथ मिल्यो मोहन,
पतिवरता जांण ॥ ४ ॥ १४ ॥ ६६ ॥

करताँ आवियो, जिन विरद अपणो जांण । इला आवत ओलख्यौ, लियो पिंगला पिछाण ॥ १ ॥ द्वादस दरसण दिया, जिन सुखमणा घर आण । आसगत कीनी आरती, ब्रह्म वधायो बखाण ॥ २ ॥ वेहद वाजा वाजियां, चित रच्यो मंगला चाव । सुरत गावे सौळवां, वर वास करकर भाव ॥ ३ ॥ अनंत लोचन आगली, जिन निरत निरमल जांण । सदा सेवै सतगुरु, परतीत ले परवांण ॥ ४ ॥ दया कर गुरु दान दिया, परमपद रीजांण ॥वनानाथ सो सवागण, वर पायो निरवाण ॥ ५ ॥ १५ ॥ ७४ ॥

परभाते उठ जाग, प्राणी नाम ले निरवाण । रहो हाजर हरषसूं; गुरु ज्ञान देशी जांण॥ टेर ॥ मैं सवालि नामका, निज प्रेम पीया जांण । सदा सेवत सतगुरु, मैं सीस सूंप्या आंण ॥१॥ पीवतां निज पड़ी पारख,मिटी आवागौंण। आतम ओलख्यो आपमें,दसुं दिस ऊगा भांण ॥२॥ प्रकाशरूपी पीव परस्या, ज्ञान कर घमसांण । सत चेतन आतमा, जां लगै नहीं जमडांण ॥३॥ सैंन दी मेरे सतगुरु चित, मिटी च्यारूं खांण । वनानाथ भया निरभय, छोडि खैंचा ताण ॥ ४ ॥ १६ ॥ ७८ ॥

अपार, पिये कोई नर जती ॥ १ ॥ पट चक्रकूं छेद, चेतन चाल्या संत सती । उलट पुलट भर पीव, निकट गंगावती ॥ २ ॥ अखण्ड जोत दिनराति, लगतहै विन वती । देख्या देहीमें दीदार, जदि हुवा तिरपती ॥ ३ ॥ रहूं चरण लिपटाय, उतारूं गुरुरी आरती । वनानाथ कहे दास, सायव मोपर छत्रपती ॥ ४ ॥ १३ ॥ ६८ ॥

## राग व्रवास चौपाई-पद ।

तुझ विन घडियन आवड़े, सतगुरु सायव सैंण । सिमरथ साचा सतगुरु अमृत आछा वैंण ॥ टेर ॥ ऊभी जोऊं वाटड़ी, कर निंगे झांकत नैन । मंदिर आवो मोहणां, दासीनूँ दरसण दैंन ॥ १ ॥ दरसण विना वहु दुखी दासी, तूं सुखी राखण सैंण । विरह करकर रही विरहणी, दरदवंती कहे वैंण ॥ २ ॥ वन वन पुकारै विरहणी, कर लगन दिया रैंण । आयो नहीं गुरु आपणौ, अवगुण पर गुण दहण ॥ ३ ॥ वेगरज सत गुरु रहैं वेहद भावैं ऊगा भांण । वनानाथ मिल्यो मोहन, पतिवरता जांण ॥ ४ ॥ १४ ॥ ६९ ॥

आज मोहन आवियो, कर दया दासी जाण । पिलंग ढालूं प्रेमरा, पल पल वारूं प्राण ॥ टेर ॥ अरज

करताँ आवियो, जिन विरद अपणो जांण। इला आवत ओलख्यो, लियो पिंगला पिछाण ॥ १ ॥ दवादस दरसण दिया, जिन सुखमणा घर आण। आसगत कीनी आरती, ब्रह्म वधायो वखाण ॥ २ ॥ वेहद वाजा वाजियां, चित रच्यो मंगला चाव ! सुरत गावे सौलवां, वर वास करकर भाव ॥ ३ ॥ अनंत लोचन आगली, जिन निरत निरमल जांण। सदा सेवै सतगुरु, परतीत ले परवांण ॥ ४ ॥ दया कर गुरु दान दिया, परमपद रीजांण ॥ वनानाथ सो सवागण, वर पायो निरवाण ॥ ५ ॥ १५ ॥ ७४ ॥

परभाते उठ जाग, प्राणी नाम ले निरवाण। रहो हाजर हरपसूं; गुरु ज्ञान देशी जांण ॥ टेर ॥ मैं सवालि नामका, निज प्रेम पीया जांण। सदा सेवत सतगुरु, मैं सीस सूंप्या आंण ॥१॥ पीवतां निज पड़ी पारख, मिटी आवागौंण। आतम ओलख्यो आपमैं, दसुं दिस ऊगा भांण ॥२॥ प्रकाशरूपी पीव परस्या, ज्ञान कर घमसांण। सत चेतन आतमा, जां लगे नहीं जमडांण ॥३॥ सैंन दी मेरे सतगुरु चित, मिटी च्यारूं खांण। वनानाथ भया निरभय, छोडि खैंचा ताण ॥ ४ ॥ १६ ॥ ७८ ॥

सोई आतम देव जाको, नहीं आर न पार । यहि परवांण वायक, लखैं संत विचार ॥ टेर ॥ आत एक कर,अनेक धरम नेम धार । जप तप तीरथ जो जिग,जो किय करतार॥१॥आतमके आधार किरिया होय सब प्रकार । आप चेतन सबी परखे, अक्रिय निर धार ॥२॥ सोइ आतम सदा केवल, माया नहीं लिगार तोय में लाधे नहीं, जो बीज अरु विसतार ॥३॥ सुरत. अरु सिमृती, दोऊ यही वरणै सार । वनानाथ ब्रह्म ऐसो, न कोई जीतनहार ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८२ ॥

करणा हुवे सो करलो साधो, मानुप जन्म दुहेलो ॥ लखचौरासी भटकत भटकत, हमके मिल्यो महेलो॥ ॥ टेर ॥ जप तप नेम वरत अरु पूजा, ओ पट दरसणको गेलो । पारब्रह्म कूं जांणत नाहीं, जुग जुग वाट वहेलो ॥ १ ॥ कोई कहै हर वसै वैकुंठां, कोई गरु लोकमें कहेलो । कोई कहैं शिव नगरीमें सायव,भोला भरम मरेलो ॥ २ ॥ अणसमझ्या हर दूर वतावैं, समझ्या साच कहेलो । सतगुरु सैन दिवी किरपा कर, हरदम हरको गेलो ॥ ३ ॥ जीयाराम गिल्या गुरु पूरा, अजपा जाप जपूंलो । कहैं वनानाथ सुणो भाई साधो, सत्तगुरूको हेलो ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८६ ॥

इण पंथ संत अनेक उधरिया, सतगुरु साख कहेलो। सिंवरचा सो संत पार पहुँचा, विन सिंवरचा डूवेलो ॥ टेर ॥ हरदम तार लगी घटभीतर, नाभिसुं निगे करेलो। उलटा भांनु पिछम जाय ऊगा, झिलमिल जोत जगेलो ॥ १ ॥ त्रिवणी जाय हंस विराजे, हीरा चूंण चुगेलो। मिटगई त्रास परम सुख पायो, जुग जुग राज्य करेलो ॥ २ ॥ उपज्या आनंद गगन जाय गरज्या, अनहदनाद घुरेलो। पीवत प्रेम विसरगई काया, जीव पीव मिल रेलो ॥ ३ ॥जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, सुन विच वास वमूंलो। कहें वनानाथ सुणो भाई साधो, जगसुं रेत हुं अकेलो ॥ ४ ॥ १९ ॥९०॥

सुन सायरमें सनमुख रैणा, सतगुरु पार करेलो। जड़ चेतनसूं परे परम गुरु, पद पूरण परसैलो ॥ टेर ॥ नहीं कोई अजपा जाप सिमरणा, किरिया करम थकेलो। दिष्ट न मुष्ट द्रिश में नांही, केवल गुरुगम गेलो ॥१॥ निरगुण नाम निगे विन नेड़ो, विन नैणां निरखैलो। दीसतरूप अरूप अपरबल, अकिरिय होय रहैलो ॥ २ ॥ सरवग श्याम सकल ब्रह्म व्यापक, नहीं कोइ संग अकेलो। निरभै पदरो कियो निवेड़ो, अमरालोक वरैलो ॥ ३ ॥ जीयाराम गुरु अगम अगोचर, क्या करणी कर केलो। कहे वनानाथ सुणों भाई साधो, अगम निगम दे हेलो ॥ ४ ॥ २० ॥ ९४ ॥

यो सिद्धांत सभीके ऊपर, अपणी आप लखेलो।
परापेर वैखरी वारें, सब परकाश करेलो ॥ टेर ॥
सुंन न धुंन धरण नहीं गगना, नहीं गुरू नहीं चेलो।
चवदे जल थल ब्रह्मंड नाहीं; आतम अचल अकेलो॥१॥
आप अखेतां सबखे माया, ज्ञाता ज्ञान न गेलो। गुपतसूं
गुपत प्रगटसूं प्रगट, नहीं न्यारो नहीं भेलो ॥२॥ नहीं
कोई चित अचित न चेष्टा, नहीं कोई गेह तजेलो।धर-
माधरम अधरम न वामैं, कहण अकहण न हेलो ॥ ३ ॥
नहिं होणे मिटनेमैं आया;बोधस्वरूप रहेलो। वनानाथ
सोइ है द्रष्टा, नहीं ऊलो नहीं पेलो ॥ ४ ॥२३॥९८॥

## रांग ।

ऐसा मेरे सतगुरु खेल रचाया, खबर करो
खिलका मांहि ख्याली आप अलोगत थाया ॥ टेर ॥
कर चौकस चेतनकी चौकी, अरध ऊरध सुल-
झाया। उलटा पवन कँवल मांहिं पलट्या, वंकनाल रस
लाया ॥ १ ॥ इला पिंगला होय कर भेली, सुखमण
सहज मिलाया। लगरही तार त्रिवेणीरे छाजें, अजब
झरोखे आया ॥२॥ बोरंग राग हुई रंग महलां,गगनमं-
डल गिरणाया। सुरत निरत दोऊं अरधंग्या, मिलकर
मंगल गाया ॥ ३ ॥ मिलरह्या जीव शीवके मांही,

एकरूप निज थाया । कहै वनानाथ सुणो भाई साधो, लगै न जमका दाया ॥ ४ ॥ २२ ॥ १०२ ॥

धिन गुरु अविगत भेद बताया, तार न तूटे कबहुं न छूटे मेहर करी जब पाया॥टेर॥ तन मन तार लगी त्रिवेणी, इलां पिंगला धाया । पांचूं उलट मिली आतमसूं प्रेम पियाला पाया ॥ १ ॥ सुरता नारी सनमुख प्यारी, ज्ञान घटा झुक आया । परस्या पीव प्रेम सुन वासी, अनहद राग सुणाया ॥ २ ॥ अणभै वांणी राग अगमकी,जांणी आदि अनादी पाया। पूरणभाग मिल्यो अविनाशी, भरम करम नहीं काया ॥ ३ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा,जम जालम समझाया ।कहै वनानाथ सुंणो भाइ साधो,अमरपट्टा ले आया॥४॥२३॥१०६॥

ऐसा मेरे सतगुरु देश दिखाया, करी कृपा सतगुरु निज स्वामी,सिमरथ साच लखाया ॥टेर॥ इरकुं हटक अटक जम जालम, गुण इंद्रिनकूं ढाया । नव तत परे निरखिया निरगुण, आप स्वरूपी थाया ॥ १ ॥ दरस्या देव प्रेमसूं प्रीतम,अवरण अजर अजाया । समता सहज रमजमांहि रहता, नहीं कोई गया न आया ॥२॥ कैसे कथूं अकथ भइ मालम, वचन परे थिरथाया। दिष्ट न मुष्ट लंघु दीरघ नाहीं, जहां कोई धूप न छाया ॥ ३ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, अधर दलीचे

आया । कहे वनानाथ सुणो भइ साधो, अबके मुजरा पाया ॥ ४ ॥ २४ ॥ ११० ॥

साधो भाई परमप्रकाश हमारा, परतकहीं परवांण सिद्धान्त,आपही जांणन हारा ॥ टेर ॥ आप अपार वार नहीं पारा,सुते दिखावत माया;ता मायामें भेद तिहुंगुण, चौथा रहै निरदाया ॥ १ ॥ वांणी चार विचार परख के, अनुभव उकत वताऊं । जाग्रत सुपन सुखोपति तुरिया; भिन भिन कहि दरसाऊं ॥ २ ॥ विसवे जीव अवस्था जाग्रत; देहस्थूल अभिमाना । इंद्र्यां विसे वैखरी वांणी, रहै नैण अस्थाना ॥ ३ ॥ तेजस जीव अरु सुपन अवस्था,लिंग शरीर कवाया । संकलप भोग मध्यमा वाणी, कंठस्थान रवाया॥४॥प्राज्ञ जीव अवस्था सुपुपति,कारणदेह अनादी । भोगसमान पश्यंती वांणी, हृदयस्थान समाधी ॥ ५ ॥ साखी स्वरूप अवस्था तुरिया देह अदेह न कोई । वांणी परा भोग परमानंद, स्थान मूरधनि सोई ॥ ६ ॥ सुद्धस्वरूप अवस्था वारे, ज्यां च्यारांकी हांणी । वनानाथ सोइ निरवंधण, अपणी आप पीछांणी ॥ ७ ॥ २५ ॥ ११७ ॥

## छुटकरवांणी राग।

होय हुसियार रहो गुरु आगे, वैहोनी समझ रे साग। वीरा होय हुसियार, रहो गुरु आगे ॥ टेर ॥ ओ संसार

कांटां मांहिली वाड़ी, फल शुभाशुभ लीजै ।.फूल देख फूला मत रहिजै, घांम पड्यां कुमलीजै ॥ १ ॥ केइ नर हुवा केइ नर होसी, ज्यांरी जुगत करेने जोईजें ।
चूकां थकां पड़ौ चौरासी; भवजलधार वहीजें ॥ २ ॥
तुरत करो तिरणरी त्यारी, ओ जम ऊभो शरसारे ।
आयो दाव मारै मनमांई, पालपहूँताने पाड़े ॥ ३ ॥
ससतर बांध शीलरा साचा, बुद्धि वगतर परीजे ।
सिमरण सेल दिया गुरुसायब, जमसूं जुद्ध करीजे ॥
॥४॥ साचा संत स्वरगमें मालें, पांच पचीसौ पालें ।
आदर घणो अलखजीरी दरगा, जमरो जोरन चालें ॥
॥ ५ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, कर किरपा दी सो जी । वनानाथ जमसूं जुध जीता; पाया पद निरभो- जी ॥ ६ ॥ २६ ॥ १२३ ॥

ओ जग भूल पड़्यो भवसागर, क्यूंकर दे गुरुज्ञाना ।
चेतत नांहि चौरासी मांही, मोह माया रस भीनां॥टेर॥
कोई कहे में जप तप साजों, कोई गहे मुख मूना ।
कोई कहे तीरथ कर आऊं, ऐसे भटकत सूंना ॥ १ ॥
कलस पूर कवली बरतावें, मुखसूं कहें प्रंथ झीणा ।
अगमपंथकी खबर न जाकूं, पंथवादी मतहीणा ॥ २ ॥
कहत ढूँढिया सवी पापिया, जीवदया नहीं पालें। अपणी दया जैन मततांई; सरवग दया न भालें ॥३॥ कहे दर-

वेश दीन घर दुर्लभ,सब कलमांमें आवें । पांच नि
तीस कर रोजा, ज्ञान विनां दुख पावें ॥४॥ विप्र
ब्रहमाकों धारें, और धर्म कहें ऊला । गरज पड़्यां
गौमुखीमें; होमकरकर भूला ॥५॥ जंगम कहे जगत्
मेरी, सब मेरे आधारा । सगलोई भार सहे सिर ऊप
इण अभिमानें हारा ॥ ६ ॥ जोगी कहें हम आ
जुगादि, हम विन दूजा नांही । आदि अंतकों चीन
नांहीं, यूं भवसागर मांहीं ॥७॥ कहें सिन्यासी हम स
ऊपर, हे सिन्यास करारा । करमांरो नास करणो न
जांणें, फिर फिर करत व्योहारा ॥ ८ ॥ पटमत मां
वाद हे वहु विध, अपणी अपणी खांचें । वनाना
आपकी निश्च,ज्यां पटमत नहीं पांच ॥९॥२७॥१२

## राग ।

इणविध हालो गुरुमुखी, सुण सुण करो विचार
गुरुविन गैलो ना मिले ॥ टेर ॥ पाल पुरांणी पगनवा
चल्यो वटाऊ वे वाट । कोऊ वटाऊने घेरके, ल
समझरी वाट ॥ १ ॥ जावतो मारगियो जांणदो
वलतांरो करो निहाल । वलतां साधूड़ांरी हाटड़ी,गुरुगम
विणज सँभाले ॥ २ ॥ वे हर हीरारा पारखु, जाम
म्मजेन करो वोपार, विन समज्यां नहीं आपड़ो, थांरी
जावोला हार ॥ ३ ॥ पोटां वांधी प्रेमरी, माये
भरी अपार । सुगंरा सौदो कर चल्या, निगुरा

फिरे असार ॥ ४ ॥ इला पिंगला सुषमना, त्रिवेणीरे निज पार। वरसे फुंवारा प्रेमरा, झिलमिल जोत दीदार ॥ ५ ॥ पारब्रह्म पद परसिया, दसमें किया मुकाम। अनंत कोटि संत ताँ वसें, सो निज निश्चल धाम॥६॥ पट्मत वेद पुरांणमें, ये परगट निरधार। जीयारा गुरुकी दया, वनानाथ कही सार ॥ ७॥ २८॥१३९॥

सतमारग सतगुरुतणा, चाले संत सुजांण, निगुरा नर पाछा चले ॥ टेर ॥ चालो रे गुरु हाटड़ी, लेसां वस्तु विचार। जग व्योपारी में जांणिया, ज्यांरे वुसतां अनंत अपार ॥ १ ॥ वेपारी निज प्रेमरा, ज्यांरे गिरथां भरया भंडार। सतसंगत सुगरा ग्रहें निगुरा गया विडार ॥ २ ॥ गुरुमुख गरवा चालणा, समझ सुघड़रो काम विन समझ्यां फल ना मिले, पचपच मरे रे अजाण ॥३॥ गूणां भरी गियाँन री, अधिक प्रेमरी खाण। मतवालो मन लादियो, नर चाल्यो वहु जाण ॥ ४ ॥ विषम घाट वंक नालरा, आगे मांगे दांणीड़ो दाम। पट्टा लिखाया गुरुज्ञानरा, दांणी ऊभो करे रे सिलाम ॥ ५ ॥ गंगा जमुना सरस्वती, ताँ मिल मिटया संताप। हंस अमरफल चाखिया, जप्या अजपा जाप ॥ ६ ॥ गगनमंडल जाय गरजिया, अनहद सुणी अवाज। सुरत विलंबी स्वामसूं। सरया सवी विध काज॥ ७ ॥ सुन

सायर सूभर भरया, सो हंसांकी धाम । गुरुमुख मोती वीणिया, वां पाया विसराम ॥ ८ ॥ जीयाराम गुरु भेटिया,परस्या पद निरवाण। वनानाथ निरभे भया, चित मिटगई चारू खाण ॥ ९ ॥ २९ ॥ १४८ ॥

## राग ।

हरदम हर वोलंदा, निगे करे मैं निरख्यो जोगिया । सोहूं साच कहंदा,सुंनने सायर रे मांय हो निरगुण रहंदा ॥ टेर ॥ प्रथम नाम निगे कर नाभी, रवि शशियर धवणाया । सुरत शब्द एकण घरलाया, जूना पीव जगाया ॥ १ ॥ सैंस कला सारी सारंग यूं, जोगी जोग जगाया, तीन देव वाकी करत खवासी, अजपा रहत अचाया ॥ २ ॥ गिगन गुफामें गेवी गरज्या, गुरुवचनां वहे आया। मिलग्यो मेरम मया कर मालक, मदरम मुड़दा लाया ॥ ३ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, मोय पूरण प्याला पाया। वनानाथ योगेश्वर वोले, मेरा सोवन सिखर मठछाया ॥ ४ ॥ ३० ॥ १५२ ॥

## राग आसावरी ।

साधो भाई जोगी जगसें न्यारा, ज्यांका निगे किया निमतारा। साधो भाई जोगी जगसें न्यारा, ॥ टेर॥ पांच पचीस तीन वस करके, किया कालका चारा। आसण

मार अडग होय बैठा, मिटगया भरम अंधारा ॥१॥ दरस्या देव भेव नहीं वाके, सर्वज्ञ सकल पसारा। वाका खेल खरा कुदरतमें, रैता सबसूं न्यारा ॥ २ ॥ वाकी महिमा कही न जावे, नित निरगुण निरधारा। इण पदवीकों अरथ कर खोजें, सो पद पावें पियारा॥३ ॥ अविगत अखे अमर अविनासी, निरधुंधी निराकारा। वनानाथ कह में वांई वसत हूं, जां नहीं कालका सारा ॥ ४ ॥ ३१ ॥ १५६ ॥

## राग।

समझो साधो सुरत करैं, सहजो सहज समावै, करण अकरणा वांनही आप आपेई पावै॥टेर॥चल पंछी विन पर उडयां, सीधो सुंन जावें। वेगमपुर अस्थान है, आवागिवण न आवें॥१॥अविनासी तांपर वसैं, रचना नहीं आवें। ज्यांमें सृष्टि उतपति करी, वाकों किम कर पावें ॥ २ ॥ दिष्ट परें देवल सही, केवल होय जावें। झाँई परें सांई वसें, वाको दरसण पावें ॥ ३ ॥ विन पारख परलोककी, महिमा सब गावें। वनानाथ कहें समझलो, एड़ो दाव न आवें ॥ ४ ॥ ३२ ॥ १६० ॥

## राग।

साधो रे ऐसे सैन समांई। समज्या सोई गोतलो, गुरुसे गम आई ॥ टेर ॥ विन वाती दीपक जगें,

ज्यांरी जोत सवाई । तीन लोककी तिमरता, तामें नहीं काई॥ १ ॥ पर विन पंछी घरूं उडया, बैठतां खोज विलाई। उलट चल्या असमानमें, आप अधरे वाई ॥२॥गमकर गिगन विलुंबिया, विनकर कलपाई अनड़ बसे आकासमें, धर पावन लाई ॥ ३ ॥ सबके परे वो पुरुष है सो दीसंता मांही । चंदा दीसे अंबु मया, रहता गिगना यां नांहीं ॥ ४ ॥ समदृष्टी संत समझलो, सब घट एक सांई । यूं जांण्यां जिन भरमना, भागे नहीं काई ॥ ५ ॥ महरस मोल अमोल है, सब संतां गाई । बनानाथ ब्रह्म प्रापति, निर्भे दरसाई ॥ ६ ॥ २३ ॥ १६६ ॥

साधो रे ऐसे ब्रह्म विचारो । ब्रह्म पायां भ्रम ना रहै, सब घट इक सारो ॥ टेर ॥ ज्यां घटमें प्रगट भयो, सो घट दीसत न्यारो । ऐसा पुरुष तां रहया, ज्यां नहीं मायाको सारो ॥ १ ॥ द्वादश परिपूरण भयो, उलट नहीं आयो। जाप अजपा यो थकया, भरियो साप अमायो ॥ २ ॥ सिना पालकी सिंधु है, आ बेगमकी बानी । ज्यां हंसा निरभै भया, तां नहीं काल निसांणी ॥ ३ ॥ अधर मथनकी महलमें, संतांका वासा । बन- दरसीन है, मेटी सब आसा ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७० ॥

## राग ।

मन वांगिया थांग. विगत न आणि । विगत न

जाणेरे मन वांणियाँ॥टेर॥अरध शरीरी कुबद विराणी, ज्यांसूं हँसकर बोलें। साय सरीसा सतगुरु मिलिया, कबहुँ न अंतर खोले ॥१॥ बैठ दुकानां दालिद विणजें, मोल सवाया चावें। चेतन ग्राहक मिले तोये तबही, मार सिरां पर खावे ॥ २ ॥ लेखो चोखो करे पछाड़ी, ग्राहक उठ घर जावे। दियो दाम आयो नहीं करसी, अधकी पांण चढावे ॥३॥ एक दिन तोमें आण वणेला, जब सायब नाव चुकावे। मार पड़े पापांरी पूरी,जाव कछू नहीं आवे ॥ ४ ॥ सतगुरु जेसा सेंण तुम्हारे, ज्यासूं सनमुख होयले। वनानाथ कहे भवसागरमें, आयो दाव क्यूं नी जोयले ॥ ५ ॥ ३५ ॥ १७५ ॥

## राग।

साधो भाई ओ झगड़ो कद तूटें। के कोय मिलसी संत सायबका, के सतगुरु गमले ऊठें ॥ टेर ॥ साच झूठ मिल करी लड़ाई, लंक लगाया सांसें। सुमता कुमता फिरें विचाले, इम करले इम खेंचें ॥ १ ॥ भारत रच्यो भरम मांहि भारी, हूं तूं भिड़चो अभागी। चेतन चोकी न्याव चुकायो, मार दोयां सिर लागी ॥ २ ॥ दोनूं पकड़ के किया कबजमें, वारें जांण नहीं पावें। जनम केद कीनी कीमत कर, चून चौतरें पावे ॥ ३ ॥ आयो संदेसो कह्यो सबनकूं, कोई लड़न नहीं पावो।

वें तो बँध्या आपरे हाथे, मार सिरां थेई खावो ॥ ४॥ इण झगड़ेरो सतगुरु साखी, के कोई संत सुजाणा । कहे वनानाथ सुणो भाइ साधो; झगड़ारा किया वखाणा ॥ ५ ॥ ३६ ॥ १८० ॥

साधो भाई हर भज पार उतरणा । निरख निरख पग धरणा ॥ टेर ॥ डोरी अधर लगी आकासां, गमकर गिगन चढाणा, नटवो निरत निंगे कर निरखे, अगम देश इम लेणा ॥ १ ॥ धीरज धाम धारणा गाढी, चहुंदिस चेतन रैणा । सधर पुरुष जां संसें नाहीं, माया देख तज देणा ॥ २ ॥ सुंन समान सरोवर सांई, ज्यां हूं तूं नहीं कैणा । समदृष्टी होय जोवो सकलमें, ठोड़ थिरप नहीं थाणा ॥ ३ ॥ दृष्ट न पड़े मुष्टि न आवे, ऐसा अगम पीयाणा । कहें वनानाथ सुणो भाइ साधो, सो पद है निरवाणा ॥ ४ ॥ ३७ ॥ १८४ ॥

साधो मेरी सुरत सायवजीमूं लागी, मो मन भया वैरागी ॥ टेर ॥ खोज चल्यो खिलकामें आगे, पंथ चल्यो गुरु पागी । राय विनां एकरसता चलाई, लार लियो वैरागी॥१॥निंगे नहीं ज्यां निरखण लागो, कलह कलपना त्यागी । कर कीमत ओलखिया अंदर सबद रूप अणरागी ॥ २ ॥ सुनमें सनमुख मिल्यो सुरवां, बोलत बोल सवागी । मिलग्यो माल महोले मांही, कीवी

दुरमति आगी ॥ ३ ॥ सतगुरु सरणें सहज समाया, सोहं शब्द सरवंगी । कहे वनानाथ सुणो भाइ साधो, सैंन गुरूरी गम जागी ॥ ४ ॥ ३८ ॥ १८८ ॥

साधो समजे संत पियारा । समज्या संत सरव सुख पावे, मिटगया भरम अंधारा ॥ टेर ॥ आप अदेख देख सब माया, इमकर रच्या पसारा । समज्या सो सत सबदां लागा, भ्रम वंध्या जग सारा ॥ १ ॥ शब्दस्वरूपी सबघट व्यापक, किया चेतन उजवाला । दरस्या देव दसूं दिश पूरण, खुल्या भरमनारा ताला ॥ २ ॥ ब्रह्म भरचा भवसागर नाहीं, ज्यां नहीं मायाका चाला । दीसे सोई दरसती नाहीं, आप अदेख उजाला ॥ ३ ॥ गुरुपरताप गम कहूं समझ कर, हूं तूं मिटया विकारा । कहे वनानाथ सुणो भाइ साधो, अब मेरे आनन्द अपारा ॥ ४ ॥ ३९ ॥ १९२ ॥

ऐंसी सैंन समझ मन मेरा, समज्यांसूं घर पावे रे । अनंत संत हुआ अरु होसी, सारा समझ सरावे रे । ॥ टेर ॥ निगे विना निंदता औरांकूं, विन पारख पच हारेरे । जागे नहीं भूलमें सूता, भोले जनम गमावे रे ॥ १ ॥ जाग्यां विना जुगत नहीं दरसे, विन भैरम मुरझावे रे । अपणे दिलकूं नहीं परमोदे, गेला ज्ञान गुड़ावे रे ॥ २ ॥ जाग्या जिके जुगोजुग जीता, पर-

सण होय पिव पावे रे। जसा होता जैसा भरपाया, बहुरि जनम नहीं आवे रे ॥ ३ ॥ हर गुरु संत एक कर जांणें; दुतिया दूर गमावे रे। कहै वनानाथ सुणो भाई साधो, वै अमरापुर जावै रे ॥४॥४०॥ १९६ ॥

ऐसी अजरजरो मन मेरा, अजर जरयाँ गम आवे रे। गम कर ज्ञान अगम घर जावें; अगम अगोचर थावे रे॥ टेर॥ उठ परभात समर सायबकूं, परगल प्रेम पिलावै रे। अपणा उलट आप घर लावें, सुधा सरग सिधावै रे ॥ १ ॥ आपा मिथ्या आपदा छूटी हरदम हेत लगावे रे। हिरदे धार सार नाभीसूं, सूधो सुखमण आवे रे ॥ २॥ सुरत निरत मिल चली महोलें मिलकर मंगल गावे रे। सनमुख सांम रींझायो सईयां गेरा गिगन घुरावे रे ॥३॥ में नहीं ज्यां में निज थाया, कोई दुतिया न थाया रे। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, सहजोई स्वरग समाया रे ॥४॥४१॥ २०० ॥

## राग।

एक हंसा अगमसूं आया, ज्यांरा दरसण विरलां पाया ॥ टेर ॥ दिल दरियाव भरया भरपूरण, गम कर हंसा आया।पाव विना वो बैठा पंछी, महरम मोती पाया ॥ १ ॥ मानसरोवर हंसा छाजे, नहीं बुगलांका दाया। हंसा खोत सायरवासी, वांरा समता सहज सुख छाया

॥ २ ॥ हंसा हरप मिल्या हरमांहीं; भाग भला सर आया। पूरण पास आस नहीं वाके, सहजै सगम समाया ॥ ३ ॥ पूरण पाय फेर नहीं आया, आदि अस्थल थाया। कहै वनानाथ सुणो भाई साधो, वेगम वाणी गाया ॥ ४ ॥ ४२ ॥ २०४ ॥

मेरा हंसा सहज समाया। सो तो आवागिवण न आया ॥ टेर ॥ मानसरोवर हंसा जांणें, हंस हंस वह आया। वे हंसा महरम का गोती, नहीं बुगलांकूं ठाया ॥ १ ॥ नीर बिना जां सरवर भरिया, घाट विना वह न्हाया। स्वांयत बूंद निपज्या मोती, वे चुग हंसां खाया ॥ २ ॥ बहुत दिनांका प्यासा हंसां, सुनसायर सुखपाया। जुगजुग राज करै सरवर पर, ज्यां हंसा थिर-थाया ॥ ३ ॥ हंस हमारा शबद विवेकी, हंसो हंस मिलाया। कहै वनानाथ सुणो भाई साधो, निरभै नगर वसाया ॥ ४ ॥ ४३ ॥ २०८ ॥

वा घरकी साधो कहूं निसांणी, जा घरमें हंसा रहता। काया छोड़ चलै जब हंसा, जा हंसा हरमें समाता ॥टेर॥ जब तेरा स्यांम रैता सुन व्यापक, बोल वचन कासुं लाता। जसे घृत मही मांहि मिलरह्या, मथियां विना नहीं पाता ॥ १ ॥ पांच तत्त्वका इंड उपाया, ज्यामें भवँर गुंजाता। अपणी संका जोवणरे कारण,

दूजा रूप धराता ॥२॥ गम कर ज्ञान अगम घर रहता, गम कर वेगम पाता । धरता विन करता नहिं पावे, पारख विना पिसताता ॥ ३ ॥ जैसें दरपण ले मुख आगे, निगे करी जद निंदता । ऐसी बात कही क्यूंनी पहला, जद हंसा भरमाता ॥ ४ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, कर सेनी समझाता । धनानाथ निरणे कर निरख्या, सत्य वचन दरसाता ॥ ५ ॥ ४४ ॥ २१२ ॥

## राग ।

सिमरो संत सुजाण समझ, कायासिंध मिली । तेरा अवसर बीना जाय, जागनी जोगी जुगत वणी ॥ ॥ टेर ॥ निरख निरख मेलो पाव, बाट बारी विषम वणी । नहीं कायरका काम, सूरा पैढे सत अणी ॥ १ ॥ सदा ही रहत निरवाण, सहज सुखधाम वणी । नर जासी निराधार, पूगे सोई पुरुष धणी॥२॥ नहीं कहणका काम, इनरज बात वणी । संत समजलो सो साम, जांग जेमें चंद्रमणी ॥ ३ ॥ धनानाथ कहे जांन, शबदकी एक साल भणी । मेरे जीयाराम गुरु पान, आन नहीं सुगत नणी ॥ ४ ॥ ४५ ॥ २१३ ॥

[illegible] । विच मोतिया निरवाणी । जासूं जनम मरण [illegible] ॥ ॥ टेर ॥ आपा मेट आपमें दरसें, कर प्रेम प्रीत [illegible] ॥ घट घट रोम रोम में व्यापक, सतगुरु सेन

लखाणी ॥ १ ॥ सुरत शवद सुखमण घर लाया, तारो तार मिलाणी। नाभी जाय नामकूं निरख्या, अरध उरध सुलजाणी ॥ २ ॥ उलटा प्राण पिछम दिश फिरिया, वंकनाल वरसाणी। मेर इकीसूं छेदगई सुरता, गगनमंडल गरजाणी ॥ ३ ॥ राग छतीसूं वाजा वाजें, वां निरगुणकी रहाणी। गुरुपरताप चड्या गढ वंके, अनहद नाद घुराणी ॥ ४ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, निगम भौम दरसाणी। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, अनभौ जोत जगाणी ॥ ५ ॥ ४६ ॥ १२१ ॥

## राग।

देखोनी देख देखनमें इण रणूकारकी धुनमें ॥ टेर ॥ नाभकँवलसूं नाम चलत है,वंकनाल वहन में। सुरत शवदकै ताली लागी,अकल कला आपन में ॥ १ ॥ सुरत निरत मिल चढ़ी सिखरगढ़, निगम भोम निरखनमें। अनहद नाद वंसुरी वाजै, झीणी टेर सुननमें ॥ २ ॥ सोवन सिखरमें आप विराजें नहीं वो जनम मरणमें। झिलमिल झिलमिल जोत जगत है, सोहुं वचन सवनमें ॥३॥तिरगुण ताप तिमिर नहीं भासें, रहता लगन मगनमें। वनानाथ सोई पद परस्या, गुरुमुख ज्ञान लखनमें ॥ ५ ॥ ४७ ॥ २२९ ॥

## राग ।

साधो भाई देउं ऊंचो चढ़ हेलो । जोगी जती सती सब सुणज्यो,कहूं मुक्तिको गेलो ॥टेर॥ घर विन अधर माग विन मारग,विन पग पंथ दुहेलो । कर विन करण काया विन आसण, उनमुन रहत अकेलो ॥ १ ॥ जैसे पंछी उडत आकासां, दीसत है जब ऊलो । दृष्टि परे दीसे नहीं पंछी, यू निरभ पद गहेलो ॥२॥ धरणि न गिगन विना घर आदू, साधू तां समझेलो। आवागिवण आवे नहीं कबहूं, पावें मुक्ति महेलो ॥३॥ देह विना देव विदेह ब्रह्म व्यापक, ज्यां हर गुरुसंतको मेलो । कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, में ऐस हुवो ब्रह्म भेलो ॥ ४ ॥ ४८ ॥ २३० ॥

साधो भाई,अजब संदेसो लाया। जीव दुखी देख्या संसारा,ता कारण चल आया ॥टेर॥ कर विन बाजा वज्या ब्रहमंडमें,विन सरवण सुण पाया। विन पग निरत करे ज्यां निरता विन जिह्वा गुण गाया ॥ १ ॥ रचियो रास वास ब्रहमंडमें, संत समज्या चल आया । आप आपके समज्यां परवांणे, दरशण सदा सवाया ॥ २ ॥ वेहद ब्रह्म वसे हद माया, जड़ चेतनकी काया । ताके परे वसे अविनासी,सोहम परचे थाया ॥ ३ ॥ अगम अपारा है निरधारा, निस्पृह रहे

रदाया। रंग न रूपा सदाई अरूपा, सो सायब या ॥४॥ मेहर विना मालिक नहीं मिलसी,जो ो संत सरणाया, कहै वनानाथ वसूं वा घरमें, रम करम नहीं काया ॥ ५ ॥ ४९ ॥ २३५ ॥

## राग।

ऐसी सैन समझ कर भाखी, सुणो संत जिन सोई। जल डूबै न जलै पावक मैं, ऐसा समरथ वोई ॥ टेर॥ ऐसी मौज भई मन मेरे,सदा परमपद मांई।रहता पुरुष भऱ्या भरपूरा, विधि निषेध नहीं वांई ॥ १ ॥ देवल देव पुजारा नांही, ज्यां एकमेकता सांई। अफुर देस आसण है वाका, निज कूटस्थ गुसाँई ॥ २ ॥ महिमा अगम अपार ब्रह्मकी,कहाँ लग वरणी जाई। जो समज्या सो सैन समाया, अगम निगम कहैं तांई ॥ ३ ॥ बोल्या बोल अबोल समझकर, धन्य गुरुकी गम आई। तोल अतोल अमाप अपरबल, वनानाथ दरसाई ॥ ४ ॥ ५० ॥ २९३ ॥

एसी सैन समझ मन मेरा,अवर धरो नहीं काया। है तेरे पास अमर अविनासी, ज्याकूं काल न खाया ॥ टेर ॥ धर अंबर विन रहे निरधारा, अधर दीप निरदाया। वसता वास किया विन वसती, विन वसती

ले वसाया ॥ १ ॥ रहता पुरुष परापर पेला, जांक
ज्यां थाया। निरभै हंस वसे उण वसती, ज्यां कोई
न छाया ॥ २ ॥ वाकी महिमा कहां लग वरणूं,
तिरगुण नहीं माया। स्वरग नरक सुख दुख नहीं त
अवरण थया अजाया ॥ ३ ॥ आप अथाग थाग
कोई, सतगुरु भेद बताया। रंग न रूप रेख नहीं
वनानाथ लख गाया ॥ ४ ॥ ५१ ॥ २४२ ॥

## राग सोरठ।

जगमें करता काल कसाई, जैंरी विगत करे दरस
॥ टेर ॥ करता करम करैं कायामें, है स्वतंत्र रहजा
भिन भिन कर इंद्रियां रस भोगें, भरम रह्या या मांई॥१
जमरांणो जोरावर जुड़ियो, फिर फिर करत लड़ाई। न
द्वारा निश्चै कर रोक्या, दसवें में डर नांहीं॥ २ ॥ दस
द्वार दरसिया देवा, शोभा वरणी न जाई। भल
भाण ऊगो ब्रहमंडमें, समरथ कला सदाई ॥ ३
भागा भरम भरोसा आया, सतगुरु सैन बताई
वनानाथ कहे अलख अकरता, सब घट रहे ए
सांई ॥ ४ ॥ ५२ ॥ २४७ ॥

## राग सोरठ।

भाई करता वड़ो अथिर रे । सतगुरु सैन

समजकर सारो, रहो अकरता थिर रे॥ टेर॥ जमरांणे कर जग सब रोक्या, भिन भिन तार सभर रे। अपने स्वाद सकल जग डूबा, निस्वादी कोई नर रे ॥ १ ॥ साध सोई सत सिमरण सारैं, रहै सतगुरुको डर रे। माया रसकूं कबहुं न मानैं, गम कर पूगा घर रे ॥ २ ॥ सहज भौम सतगुरुका वासा ज्यां फुरता नहीं अकुर रे। पूरण भाग परमपद पाया, तोड़्या काल खुपर रे ॥३॥ गुरु जियाराम सरब गत पूरा, समझ स्वरूपी सर रे। वनानाथ ले भेद वैरागी, जीवन मुकत विचर रे ॥ ४ ॥ ५३ ॥ २५१ ॥

मन तूं वेगमकी गम कर रे। अगम पंथ ज्यांरा अधर पियांणा, निराधार पग धर रे॥ टेर ॥ वेगम गम कर किया पसारा, रचिया धरण अंबर रे। चवदेइ तवक मायाका चाला, जां लग ऊपजै मर रे ॥ १ ॥ द्वादश जोजन फिरत दुहाई, चेतन खबर कर रे । शबद दिवाण चब्यो सिमरण कर, पूगो पुरुष पर रे ॥ २ ॥ सहज स्वरूपी सुंन समाया, अमरा भरया सभर रे । निरख्यो थको निजर नहीं आवे, बूंद रली सरवर रे॥ ३ ॥ गैब हुवा जब गम होय चूकी, वगम सदा सदर रे। डिगता नहीं अडग रहे आसण, कोई जन लहै कदर रे॥ ४ ॥ जीयाराम धिन धिन

या जगमें, गुपता प्रगट अक्षर रे। वनानाथ हे ब्रह्म वैरागी, वोल्या बोल निडर रे॥ ५॥ ५४॥ २५६॥

## राग वसंत।

होरी खेलूंगी घर आयके, साधोजी ओ ज्यामें, हरप हरप गुण गायके। होरी खेलूंगी घर आयके ॥ टेर ॥ पांच सखी मिल कियो महोलो, सज्यो शील सिणगार। महरम कर मेलातकी, हुई हे चलणकूं त्यार ॥ १ ॥ इला पिंगला मिलकर दोनूं, सुखमण कियो निहार। हरप हरप गुणगायके वे, आई त्रिवेणी द्वार ॥ २ ॥ वाजा वज्या ब्रहमंडमें, सुण सुनको झणकार। रंग राच्या रामत भई, निरख रह्या संत सार ॥ ३ ॥ निरगुण नाथ रिझायो सुरता, निरत कियो निरधार। रीझ करी राजी भया,दियो मुकतिको द्वार ॥४॥ परम वास वासो भयो ,रही सांमकी लार। वनानाथ खेले संत सूरा, मेरे ऐसो उपज्यो विचार॥५॥५५॥२६०॥

होरी खेलूंगी पिया पायके, साधोजी ओ ज्यामें सदा सवागण थायके। होरी खेलूंगी पिया पायके ॥ टेर ॥ पीतम फाग रमें चेतन सूं, मेरी भई जड़ चाल। होय सनमुख समजी संपिया के, नितनित भई में निहाल ॥ १ ॥ खेलत फागं पियाके परसंग, दरसण दिया हे दयाल। मेट दुहाग कीवी मानेतण, अमर पायो वर

लाल ॥ २ ॥ मेरे सांमकी सोभा ले वरणुं वहुगुण वोध विसाल। सुन सायर में सहज रमत हैं, पतिवरता भई खुसाल ॥ ३ ॥ सरव सुहाग भई मेरी सजनी, रही महोले माल। वनानाथ कहे मैं होरी खेलत हौं, ज्यूं संत खेल्या सुध चाल॥ ४ ॥ ५६ ॥ २६४ ॥

होरी खेलत भया निहाल, साधोजी ओ मोपर किरपा करी गुरुदयाल। होरी खेलत भया निहाल ॥ टेर ॥ झूठे ख्याल खेल जग भूलो, साच गह्या नहिं जाय। निरगुण फाग गुणांसूं न्यारो, साधो वेहद खेल खेलाय ॥ १ ॥ च्यारूं दिश निरत करें वां निरता, पांच पचीसूं पाल। निराधार आधार खेलमें, चली अधरकी चाल॥ २ ॥ वेगम वास वस्यो है वेहद, ज्यां परम जोत परकास। तिरगुण तिमिर मिट्यो मेरमसूं,होय रही निरत निरास ॥३॥ ऐसी फाग रमें जिन जगमें, हरगुरु संतके साथ। वनानाथ कहे मैं होरी खेलत हौं ज्यां चंद सूर नहीं रात ॥ ४ ॥ ५७ ॥ २६८॥

होरी होय रही नगर मंझार, साधोजी ओ ज्यामें खेल रच्यो एकसार ॥ टेर ॥ सुनमें संत समझकर खेलत; होरी रमत रंगदार। अनुभौ फाग अगमको खेलत, ओलगो निराधार ॥ १ ॥ सूक्षम नगर निग विन निरख्या, वरसत अमी फुंवार। पीवत हंस परम सुख पाया, छूटा सवी विकार ॥ २ ॥

अधर अथाय थाय नहीं वाको, वां खेलणकी वार । भाखत संत परापर पला, वो तो अगम अपार ॥ ३ ॥ ऐसो फाग रमें वड़भागी, जिन सतगुरु दी सार । वनानाथ कहे मैं होरी खेलत हीं, जीयाराम गुरु धार ॥ ४ ॥ ५८ ॥ २७२ ॥

होरी खेलत संत सिरदार, माधोजी ओ ज्याके है हरिको आधार । होरी खेलत संत सिरदार ॥टेर॥ होरी हरख रमें रंग रेलत, संत खेलत इकसार । पालत पांच पचीसूं पीछा, जब दरसे करतार ॥ १ ॥ सनमुख संग रमुं सायबके, लगी प्रेम पिचकार । होय हुसियार हरख कर झली, भींज्या ब्रहकी धार ॥ २ ॥ ज्ञान गुलाल उडे गुरुगमकी, होयरही मतवार । वारूंई मास रमें वड़ भागी, ओ गुरुको उपकार ॥ ३ ॥ छक रह्या संत अचित आनंदमें, अनुभौ चढी खुमार । वनानाथ कहें मैं होरी खेलत हीं, ज्यां अमरलोगकी वार ॥ ४॥ ५९ ॥ २७३॥

## धमाल ।

मेरी सुरत सुहागण खेलै ख्याल, सुण सुण मंगल भई निहाल ॥ टेर ॥ पांच पचीसूं भई हैं साथ, सब सखियें मिल मंगल गात। मन मरदंग तन बजत यों ताल, काया नगरमें रचियो ख्याल ॥ १ ॥ चित चेतनकूं लाग्यो चाव, अखंड जोतको भयो भाव। निरखत

निरता रंग अपार,जनम मरनको मिटियो विकार॥२॥ अधर महल जाकी अजब वात, परसत हरिजन सोई अजात। सुण सुण अनहद वसत वास, सरवणां न सांभली अवर तास ॥ ३ ॥ अधर पुरुप आवे नहीं जाय, कोई विरला हरिजन लखें ताय।अववट घाटां विखम वाट, वनानाथ ज्यां करत थाट ॥ ४ ॥ ६० ॥ २८०॥

मेरी सुरत सुहागण पीया पास, पिंड ब्रहमंड परे वसत वास ॥ टेर ॥ अधर पुरुपको अगम राय, विरला हरि जन पंथां जाय। चंद सूर ज्यां नहीं रजनी प्रकास, अखंड जोत ज्यांको अधिक उजास ॥१॥ वेगम वसती ज्यां गमकी हाट, हरहीरनको लाग्यो टाठ। विन कमज्या नहीं आवत हाथ, सिर साटैं मरजीवा पात ॥२॥ पीवत मिटगई और भ्रांत, जीव शिवकी एक जात। ओतपोत है नहीं थाप उथाप, मनमोहन मिल भयो आप ॥३॥ योई है जोग जुगतकी सार;अनुभौ उकती गैत्र विचार । वनानाथ सत कही पिछाण, गुरुमुख ज्ञानी लेसी जाण॥ ४ ॥ ६१ ॥ २८४ ॥

मोय सतगुरु पायो वड़ो वीर, सुखसागरकी पाई सीर ॥ टेर ॥ सुनसायरको समता नीर, मुकत मोती निपजें हीर। चेतन हंसा चाल्या चीन, तोल अतोला लेवत वीन ॥ १ ॥ विनमुख हंसा पीवत नीर, परीब्रह्मसूं भई सीर। अमोल्या वो चुगत हीर, सतगुरु

वचनां पाई धीर ॥ २ ॥ निरभै नगरी हंस अजीत, निरमल अंगा सत परतीत । जत सत शरधा सहज धीर, अमरलोककी पाई जागीर ॥ ३ ॥ हरी-राम हर सायब कबीर, जीयाराम गुरुमत गंभीर । वनानाथको चरणमें सीस, सतगुरु तारचो मोहि विसवा वीस ॥ ४ ॥ ६२ ॥ २८८ ॥

गुण गाइये रे अबे गुरुको आज । सतगुरु वचनां सरत काज ॥ टेर ॥ अमरदेसकी अजर बात, विना भोम जागीरी पात । राव रंककी एकी बाट, वां हंसा मेरा करता ठाट ॥ १ ॥ चेतन हंसा करत राज, अनहद नौवत घुरत अवाज । विन सरवण वां सुणत वाज, ब्रह्म मिलणको करत काज ॥ २ ॥ निरभै नगरी निगमपाल, नहीं कोई झींवर जमको जाल । उपजैं न विणसैं खावत नहीं काल, गिगन धूंवांज्यूं मिली झाल ॥ ३ ॥ अगमसैंन ये झीणी निराट, संत मरजी वा उण चढिया वाट। वनानाथको गुरू पकड़्यो हात, मोहन मिलियो सरणै आत ॥ ४ ॥ ६३॥२९२॥

## राग कैरो।

तरवर एक दोय फल लागा, कर महरम चढ आगा हो, सीस विना लेसी संत सूरा, कायर सुण सुण भागा हो ॥ १ ॥ कायर जीव काम नहीं आवें, सो

सतवाजी हारा हो। सिवरण साख नीपजी नाहीं, डूबा भवजल धारा हो ॥२॥ सिवरयां संत सरव सुख पावें भरिया मुकत भंडारा हो। आप तिरें अवरांकूं तारें,वे धिन आया संसारा हो ॥३॥ तन मन मार तुरत फल लीना, कर निरगुण निरधारा हो। कहै वनानाथ शबदको केरो, ऐसा भेद हमारा हो॥४॥ ६४ ॥ २९६ ॥

पेड़ पात विन तरवर ठाढा, ज्यां मन लागा मेरा हो। ले गुरुसैंन चढ्या कीमत कर, ज्यां भव नहीं लिगारा हो ॥१॥ भूला जीव जुगत नहीं जाणें, विन मेरम चढ जावे हो। अंत समें पीछा भव माहीं, निरफल जन्म गमावे हो ॥२॥ आपा छोड़ चेतन होय चाल्यां, गुरु मेरम दरसाया हो। फूल्या विरछ वहुत फल लागा, आंव गिगन चढ मोरया हो ॥३॥ वृच्छ विवेक वैठा संत सूरा, शुभ फल लेत वणेरा हो। कहै वनानाथ सुणो भाई साधो, ऐसा कथा इक केरा हो ॥४॥ ६५ ॥ ३०० ॥

विरछा एक पेड़ नहीं वाके, नहीं जड़ी नहीं डाला हो। चवदें लोक छाय रह्या उपर, लखसी गुरुका वाला हो ॥१॥ सबसूं परे द्रिष्ट नहीं आवे, ऐसा वृच्छ अपारा हो। ज्यांके मांयँ मुकत फल लागा, सिरसांटे लो सारा हो ॥२॥ सधर पुरुपकूं सतकर जाणो,

आपा तजो असाराहो। पारब्रह्मकूं परस्या चाहो
जगतसूं न्यारा हो॥३॥भेदी जिके मरमगढ जीता
निरगुण इकसारा हो। कहे वनानाथ वृच्छ चढ
केरा कह्या करारा हो ॥ ४ ॥ ६६ ॥ ३०४ ॥

अधर वृच्छ ज्याकी अटल ओपमा, ज्यां
संत सूरा हो। पाव पपील टिके नहीं कवहूँ, दे
घर मेरा हो ॥ १ ॥ सिँवरण साज चव्या श
मेर सिखर घर आया हो। नानाविधका मेवा
अटल वृक्षकी छाया हो ॥२॥ सहज भौम सिम
मेला, रहत पुरुषकूं पाया हो। आवागिवण
नहीं कवहुँ, अवर धरै नहीं काया हो ॥ ३ ॥ अ
अडग डिगै नहीं कवहुँ, ज्यां निरभै निज थाया
कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, वाँ चढ केरा
हो ॥ ४ ॥ ६७॥ ३०८॥

## राग।

हेली सुंनसायरमें झूलिये, ले सतगुरुकी स
टेर ॥ चाल सखी उण देसमें, ज्यां हंसा वसै अ
बोलत बोल सुहावणा, वे मोती चुगत विचार॥
खूंट खूंट हंसा वसै, सुंन सायर विसराम। छीलर
बैठे नहीं, पाई है वेगम धाम॥२॥हंस हंसोंनै सुहा
बुग संग बैठे नांयँ। बुग छीलर चेजा करै, हंस

समदां माँयँ ॥३॥ हंस बुगला इक सारसा, गुण कर दीसे दोय । वनानाथ मन ऊजला, हंस कहावे सोय ॥ ४ ॥ ६८ ॥ ३१२ ॥

हेली मन ममताकूं मारियें, कर कर ब्रह्म विचार॥टेर॥ ब्रह्मभेद विरला लहें, तज भवसागर भाव । चितकर चाहत चांनणो, तिरे नाम चढ़ नाव ॥ १ ॥ केइक चाहत धरमकूं, केइ किरिया खटकरम । साधू चाहत शबदकूं, जांसुं मिटे भरम ॥ २ ॥ शबद ब्रह्म सोई पार है,भ्रम रह्या सो आर। आतम तत ओलख्यां विना, गया जमारो हार ॥३॥ सतगुरुसूं सनमुख सदा, मेट रहे कुलकाण । वनानाथ उण संतकूं, कबहुं न आवे हाण ॥ ४ ॥ ६९ ॥ ३१६ ॥

सनमुख सदा सहेलड़ी, पीया प्रेमपरवाण॥ टेर ॥ पांच सखी धुर पंथमें, मिली पचीसूं आण । अरध ऊरध आसण किया, कर रही पवन पिछाण ॥ १ ॥ इला गिरण आगे करे, करत पिंगला वेण । सनमुख सुखमण सांमकूं, निरख रही निज नेण ॥२॥ द्वादश दरस्या देवता, वेहद ऊगा भाण । उनमुन मुदरा आगली, परसी पद निरवाण ॥ ३ ॥ अनहद वाजा वाजिया, सुंन विच घुरया निसाण । वनानाथ उण ब्रह्मका, केसा करूं बखाण ॥ ४ ॥ ७० ॥ ३२० ॥

चल सतगुरुजीरे देसमें, कर सनमुख दीदार ॥टेर॥ समज सखी मुख बोलिया, अधर सधर एक सांम । पाव विना पंथ चालणा, समज्यां सहेली धाम ॥१॥ मैं नहीं ज्यां मैं गया, विन पग बेगम गाम । नैण विहूंणा निरखिया, सुंन सम चेतन साम ॥ २ ॥ नहीं कोई आर न पार है, बेगम ब्रह्म अपार । गुरुकृपा वा घर बसू, पाई मुकतरी सार ॥ ३ ॥ हर गुरुसूं सनमुख रहो, करो कुवदको नास । वनानाथ पद परसिया, जीयाराम गुरु पास ॥ ४ ॥ ७१ ॥ ३४२ ॥

समझ चलो सतलोकमें, है सायब इकसार ॥ टेर ॥ स्वरग नरक पातालमें, तीन लोक पर वास । साचा साधूजन तां बसै, चोथे पद परकास ॥ १ ॥ सोई था सोई भया, अवर न दीसै पास । आप समाणा आपमें, भई दुरमती नास ॥ २ ॥ वे संत दीनदयाल हैं, देता वस्तु विचार । भाग परापत पाइये, मैरम अगम अपार ॥ ३ ॥ सात द्वीप नव खंडमें, रहता पुरुष निरास । वनानाथ पद परसिया, जीयाराम गुरु पास ॥ ४ ॥ ७२ ॥ ३२८ ॥

समझो सुरत सहेलड़ी, कर चलणे को चाव ॥ टेर॥ सखी उणवाटड़ी, सुण सतगुरुका वैंण । पाव न पपील तणा, वां संतनकी रैंण ॥ १ ॥ विखमी

सी वाटी ब्रह्मकी, पिण्ड ब्रहमंड विन धाम । सतगुरु विन सूजै नहीं,ऐसा है वेगम गाम ॥२॥ विना नींवका देवरा, विना देहका देव । विना नैंणसूं निरखणा, विन कर करिये सेव ॥ ३ ॥ विन वाती दीपक जगै, रवि चंद विन परकास । वनानाथ निरभै रह्या, अणमूरतकै पास ॥ ४ ॥ ७३ ॥ ३३२ ॥

परमानंद परकाशका, आनंद कह्या न जाय ॥टेर॥ विसवै भासै ब्रह्मतैं, ज्यं वृच्छ तोयतैं होय । उलटा देख्या तोयमैं, ज्यां वृच्छा नहीं कोय ॥ १ ॥ तरवर ज्यूं माया सबै, यामैं तिरगुण जाण । पाणी ज्यूं चेतन सदा, निरविकार निरवाण ॥ २ ॥ सोहं शुद्ध स्वरूप है,जां मायाकी हाण । वां सपंद निसपंद कहां, यूं कहे वेद पुराण ॥ ३ ॥ चेतनमैं हूं, तूं नहीं, ज्ञेय ज्ञाता नहीं ज्ञान । वनानाथ निरभेद है, सरवातीत विज्ञान ॥ ४ ॥ ७४ ॥ ३३६ ॥

सतगुरु सत समझाविया, सत चित आनंद अपार ॥टेर॥ आसत गही तजी ना सती,लिया सतोगुण सार । रज तम दोऊं सम किया,प्रगट्या ज्ञान विचार ॥ १ ॥ सतगुणतैं निरगुण लख्या, सो निरगुण सब पार । वाइते सब जग चलै,शुभ अशुभ व्यवहार॥२॥ सबमैं साखी एकसा,ज्यूं नीर विरछके साथ । पाणीमैं

लाध नहीं, बीज वृच्छ अरु पात ॥ ३ ॥शुभ अशुभ गुण तां नहीं,नहीं कोई जीतनहार । वनानाथ निश्चे लख्या टूटा विप हंकार ॥ ४ ॥ ७५ ॥ २४० ॥

नित पूरण अद्वैत में, द्वैत न दीसे कोय ॥ टेर ॥ परमानन्द परमातमा, सो केणीमें नांय । वाकी सत्ता शुध रूपतें, रची त्रिगुण मनमांयँ ॥१॥ उतपति चेतन आसरे, आप निरंतर धाम। लोह ज्यूं माया चल रही, अचल चुंवक ज्यूं साम ॥ २ ॥ नित केवल न्यारे थकां, घटम कला विचार । रविकिरण नहीं वीच है, वोध वोधक इकसार ॥ ३ ॥ है है कहे सो है नहीं, नहीं नहीं कहे सो नांयँ । वनानाथ वेचूंन है, वोल अवोल न तांयँ ॥ ४ ॥ ७६ ॥ २४४ ॥

## राग आसावरी ।

साधो भाई म मेरा मन समझाई । जैसे वृच्छा मूल समाई ॥ टेर ॥ मन पंछी मायापर पसर्यो, उडकर गिवण कराई । छलकर जाय पड्यो करमांमें, जीवबुधी ग्रहलाई ॥ १ ॥ झाल्यो न झले रुके नहीं रमतो, नानाविध समझाई । निगे करूं जव दीसत न्यारो, ओ ॱगत न आई ॥ २ ॥ पलमें खंड परखंड फिर मतो करे जां जाई । केई केई संत निरमल होय ॱ।, इण मनकी गत आई॥३॥ जीयाराम मिल्या

गुरु पूरा,मन मैरम समझाई । कहे वनाथाथ सुणो भाई साधो, अब कछु धोका नांई ॥ ४ ॥ ७७ ॥ ३४८ ॥

अव हम वेगमकी गम जाणी, अगम निगम वाकी कैणी॥टेर॥वेगम ख्याल रच्यो एक नटवे,निरता करी है निसाणी । लिवरीवरत लैरसू चढियो, घर धीरप धुन आणी॥१॥लघुता लार सार सिर ऊपर,अकल अखाड़ वैणी । कर ललकार चढ्यो लिव उपर, यह सतगुरुकी कैणी ॥ २ ॥ चढ आकाश अडग करि आसण,गहरी गिगनकी वाणी । अनहद नाद घुरै नित आगै,जोवत सुरता राणी ॥ ३ ॥ खेल खेलाय चल्यो घर अपणे, सबकूं कहूं सैनाणी । कहे वनानाथ सुणो भाई साधो अमर जागीरी माणी ॥ ४ ॥ ७८ ॥ ३६२ ॥

साधो भाई ऐसा देश दिवाना । भेला है पण भिलता नाहीं ,गुरुमुख ज्ञानी जाना ॥ टेर ॥ तीरथ करूं न जप तप साजूं,नहीं कोई धरूं ध्याना । ऐसा होय खलकमांहि खेलूं नहीं मूरख नहीं स्याना ॥ १ ॥ पग विन पंथ नैण विन निरखूं, विन शरवण सुण वैणां । घ्राण विना सव लेत सुगंध्यां, विन रसना रस पीणां ॥ २ ॥ सहज सरोवर सिमरथ हंसा, पर विन किया पियाणां । मान सरोवर मोती मुगता, निरमल नीर निवाणा ॥ ३ ॥ यूं जाण्यां जगदीश जुगत कर,

पिंड बिन पुरस पुराणा। बनानाथ कहें ब्रह्म सकलमें, घट वध कहो क्यूं कैणा ॥ ४ ॥ ७९ ॥ ३५६ ॥

साधो भाई ज्ञान घटा झुक आया। भरम करम व्यापे नहीं कबहुं,गुरुसे गुरु गम लाया ॥ टेर ॥ बादल बीज बिना नित बरसे,स्वाति बूंद झड़ लाया ॥ १ ॥ धरण गिगन बिन अमृत भरिया, सौ रस गूँगे पाया ॥ १ ॥ पीवत प्राण परम सुखपाया, जरा मरण नहीं आया। अमर देशमें आसण कीया, अटल वृच्छकी छाया ॥ २ ॥ अटल अभंगी सबका संगी, नहीं सरबंगकूं जाया। अविगत अलख खलक मांहि दरसे, गुरुमुख ज्ञानी पाया ॥ ३ ॥ झिगमिग दीप जुगतमें दरसे,सत गुरु मोय समझाया। कहे बनानाथ ब्रह्मकी बातां भेद बिना भय खाया ॥ ४ ॥ ८० ॥ ३६० ॥

साधो भाई अविगत भेद हमारा। सबसूं सांम निरंतर निरख्या, नित निरगुण निराकारा ॥टेर॥तीन लोक जमजाल पसारां, चवदे लोकसूं न्यारा। हंसा चांच पांख बिन देख्या, जाणे जाणनहारा ॥१॥ होय चेतन चाल्या बेहदकूं, पिंड ब्रह्मंडके पारा। सुरत निरतकी [illegible] दरस्या देव अपारा ॥ २ ॥सायब एक व्यापक, जड़ चेतन एक सारा। करमोनी [illegible] प्रीतम, धोका नहीं लिगारा ॥ ३ ॥ गुरुनि

रपासूं आगम सूझे, गुरुमुख लेइ विचारा ॥ वनानाथ अनुभौ कही वाणी, प्रेम मगन मतवारा॥४॥८१॥३६४॥

साधो भाई वेहद ब्रह्मविचारा। रहता आप सकलमें सांई, परसे हरिजन प्यारा ॥ टेर ॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंधा, चित मन बुध हंकारा। यामें भ्रमें सो जीव कहावे, अगम अखंडी न्यारा ॥ १ ॥ वेहद आप ताप नहिं तिरगुण, निरगुण ब्रह्म अपारा। हिलै चलै झिलकै छीज नहीं, सोई पुरष इकसारा ॥ २ ॥ वाका भेद कहणमें नाहीं, सो कहणीके वारा। सदा अकरता कबहुँ न करता, ऐसा आतम प्यारा ॥३॥ जीयाराम गुरु सैन बताई, सो सोजी सब पारा। वनानाथ निश्चै कर जांणी, भागा भरम अंधारा ॥ ४ ॥८२॥३६८॥

साधो अविगत लख्यो न जाई। जे लखसी कोई संत सूरमा, नूरमें नूर समाई ॥ टेर ॥ जैसे चंद उदक मांई दरसै, यूं सायब सब मांई। दे चसमा घट भीतर देख्या, नूर निरंतर वांई ॥१॥ दूरतें दूर उरेतें उरेरा, हर छिदारे मांई। सुपनै नार गमायो बालक, जाग पड़ी जब वांई ॥ २ ॥ जागत जोत जगी घट भीतर, जां देखूं जां साई। ऊगत भाण वीत गई रजनी, हर हम अंतर नांई ॥ ३ ॥ ममता मेटि मिल्यो मोहनसूं,

गुरुसै गुरुगम पाई। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, अब कछु धोका नांई ॥ ४ ॥ ८३ ॥ ३७२ ॥

साधो अकथ कथी नहीं जाई। जे कोई वाद वदे सोई भोंदू, ज्यां गुरुगम नहीं पाई ॥टेर॥ जैसे विहंग वहे गिगनामें, धर पर ग्रह्यो न जाई। छाया देख करो छल वहुता, आप आकासीं खाई ॥१॥ जैसे चंद उदकमें दरसे, सो ग्रहणीमें नांई। डावांडोल करो मन वहुता, चंद निरंतर वांई ॥२॥ शुभ अशुभ वस्तु घट भरिया, है नभ सबके मांई। उत्तम अधम छोत नहीं लागे, नभ निरलेप सदाई ॥ ३ ॥ ज्ञानी ब्रह्मस्वरूप ब्रह्म है, क्या जाणे जग ताई। भेदाभेद रहित निरंतर, वनानाथ मत गाई ॥ ४ ॥ ८४ ॥ ३७६ ॥

साधो भाई सतगुरु सैन वताई। पिंड ब्रह्मंडमें खेल खेलके, अमर जागीरी पाई ॥ टेर ॥ धरता कूं करता कर पकड़्या, आप बंध्या उणमांई। निरवं-वण निरगुण निरधारा, संत समझिया वांई ॥ १ ॥ समज्या संत सरव विध जांगे, परगट भेद वताई। अकल कला ओलख्यो अविनासी, आवागिवण न आई ॥ २ ॥ आवा गिवण मिटी मिल अविगत, सोई सवर सदाई। समता सहज मिल्यो सरवंगी, हंस रह्या थिर थाई ॥३॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, निरभै

धाम बताई। बनानाथ अधर किया आसण, कबहूं काल न खाई ॥ ४ ॥ ८५ ॥ ३८० ॥

साधो भाई धरता अधरमें लाया। सतगुरुजीरी सैंन समझ कर, आदि धाम बसाया ॥ टेर ॥ सात सुंन सिम्रतकी चौकी, सेत सुंन सुख छाया। ज्यां आपो आप दूसरा नांहीं, गमकर बेगम पाया ॥ १ ॥ सेत सुंन फूली सबीयनमें, आर पार एकराया। चेतन पुरुष चले नहीं कबहूं, निरभै रहत अचाया ॥ २ ॥ निरगुण नाम सांम सुखदाई, अविगत अमर अजाया। ज्यां देखूं ज्यां सभर भरिया, समज्या संत समाया ॥ ३ ॥ जीयराम मिल्या गुरु पूरा, सूक्षम भेद बताया। बनानाथ समझ सतवायक, ब्रह्म लख्या निरदाया ॥ ४ ॥ ८६ ॥ ३८४ ॥

साधो भाई दो याका उनमाना। कोण देशको सिमरथ कहिये, ताहि समझ करो ज्ञाना ॥टेर॥ चेतन चरित करे चहुं दिसमें, धर मायाका बाना। वा घरकी कदे पारख बतावो, ज्यां नहीं शब्द नहीं सैना ॥ १ ॥ धोके ध्यान धरे सब साधू, कर दूजा दुख माना। पारख बिना पड्या परपंचमें, वा घर नहीं आऐना ॥ २ ॥ चेतन होतां अचेतन क्यूं रहे, में ता कारण धरूं ध्याना। कहे सब एक दूजा क्यूं दरसे, मोय कहा लगावत

ताना ॥३ ॥सांसा मेट स्वतंतर समझो,सो आदि अस्थांना । अभरा नहीं सभर सत सायब, वनानाथ कहे ज्ञाना ॥ ४ ॥ ८७ ॥ ३८८ ॥

साधो भाई अगम सनेसो लाया।वा घरमें नित अमी झरत है,संत उहां सुख पाया ॥ टेर ॥ मेर इकीस मंडप नहीं माया, नहीं कोई जाप जपाया । किरिया करम कलेस न लागें,वो रवें अधर अजाया॥१॥मौजी मौज करें मैरममें, मगन रहत हद आया । जैस अनड़ आकाश वसत हैं, धरण पाव नहीं लायां ॥ २ ॥ गैवी गरज रह्या गिगनामें, सुंनमें रहत समाया । आर अरु पार अपार आनंदमें,मुकत महोलो पाया ॥ ३ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, कर मेरम समझाया । कहे वनानाथ विगत करलीजो,पद निरवाणी गाया॥४॥८८॥३९२॥

साधो भाई इच्छा जीव बताया । इच्छा विना आप निज नामी, यो प्रश्न उत्तर गाया ॥ टेर ॥ कहांसें जीव ऊपना कहियें,कहां करत हें कामा । कौणतरेंसूं तिर कर निकसें,कहां जाय लहें विसरामा ॥ १॥ इच्छा जीव ब्रह्मसू उतपति, किया काया कमठाणा । सतगुरु मिल्यां मूजी या घरकी,उलटा किया पियाणा ॥ २ ॥ अवघट घाटां लागिया सबही,ज्यांका था ज्यां आया॥ आदी घर अस्थान अमरपुर,संत समझ थिर थाया॥३॥

जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, दिया ज्ञान निरवाणी। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, सो जाणी सोई जाणी ॥ ४ ॥ ८९ ॥ ३९६ ॥

साधो भाई सिमरण करो सवाया। समझ्यां विना सायत्र नहीं मिलसी, यूंई भवजल दुखपाया॥टेर॥ का कारण तुम चलकर आया, का कारण धरी काया। का कारण तुम ध्यान धरत हो, कहां तुम रहो समाया॥१॥ इच्छा कारण चलकर आया, उतपति कारण काया। सिमरण करूं समजेरे कारण; सुनमें रहूं समाया ॥२॥ कौण सुंन तेरी उतपति कहिये, कौण सुंन वहे आया। कौण सुंन तेरा सहज समाया, कौण सुंन घर पाया॥ ३ ॥ जड़ सुंन में उतपति कहिये, सुंन चेतन वहें आया। वेगम सुन में सहज समाया, अफुर सुन रहूं भाया ॥ ४ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, कर निरणे दरसाया। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, प्रश्न उत्तर गाया ॥ ५ ॥ ९० ॥ ४०१ ॥

साधो भाई एक अचंभो लाया। जोवो जुगत करे कर जोगी, मडे कालकूं खाया ॥ टेर ॥ तीन लोक काल की रेणी, चित चौथे घर लाया। फुरता अफूर भया वेहद पर, ज्यां नहीं मनका दाया ॥ १ ॥ पांच पचीस नहीं ज्यां माया, गुण इंद्री नहीं काया। कलह

कलपना सुं रहित निरंतर तां तुरियं तत थाया ॥२॥ ज्यां जोऊं चेतनकी चोकी, नहीं अचेतन माया। निरमल नूर दसुं दिस दरसें, ज्यां घर हंस रवाया ॥३॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, सो निकलंक दरसाया। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, ज्यां नहीं कालकी छाया ॥ ४ ॥ ११ ॥ ४०८ ॥

## पद वेदांत । राग आसा ।

साधो भाई केणी परे रवाई। केण अकेण दोऊं दिखलावें, आप रहे निरदाई ॥ टेर ॥ वेद कतेब पुराण अरु गीता, खोज खोज थकजाई। वोतो नूर निरंतर कहिये, लिखण भखण मे नाई ॥ १ ॥ आप अपार पार नहीं वाको, इछया अनंत देखाई। भाव अभाव अशुभ शुभ दोनूं, मायामें वरताई ॥२॥ माया आदि अनादि कलपत, ज्यूं मृग तृष्णा झांई। आप सदा माया विन थाया, नहीं कलपना कांई ॥ ३ ॥ अगम निगम वाणीको द्रष्टा, शुधस्वरूप सुखदाई। वनानाथ चेतन ब्रह्म सोई, आप अवाण अचाई ॥४॥१२॥४०९

साधो भाई आतम ज्ञान सोई ज्ञाना। चेतनकूं चेतनकी सूझे, चेतन जाणे स्याना ॥ टेर ॥ दिष्ट रु मुष्ट दृश्य में नाहीं, आतम अचल अभेवा। दृश्य

अदृश्य वाहूतें भासे, भाव अभाव नगेवा ॥ १ ॥ दृश्यादृश्य अदृश्य तिहूंगुण, वर्णे है अरु मिटजाई। आतम वामें वर्णे न विखरै, लय विक्षेप नहीं काई॥२॥ माया दृश्य अनित्य असारा, नित चेतन सत थाई। यह निश्चा निरबंधण कहिये, कर निरणै दरसाई॥ ३॥ रज्जुमें सरप दरार तरू जड, भेददृष्टि कर थाई। वनानाथ भाण उदे अनुभौ, जब रज्जुकी रज्जु पाई॥ ॥ ४ ॥ ९३ ॥ ४१३ ॥

साधो भाई आतम ज्ञान वताया। आतमज्ञानी लखै आतमा, स्वपरकासी थाया ॥ टेर॥ नहीं कोई अजपाजाप सिमरणा, नहीं तिरगुण मन माया। अपणा आप उलटकर देख्या, ज्यूंका त्यूं दरसाया॥१॥ जैसे रवी सकल परकासी, किरिया अनंत देखाया। सवी देखाय आप रहैं न्यारा, यह चेतन निरदाया॥२॥ आतम अगम अगोचर सांई, आपोई आप रवाया। देश काल वस्तु नहीं ज्यामें, नहीं कोई गया न आया ॥ ३ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, आतमज्ञान दिखाया। वनानाथ अनुभौ परकास्या, भेदाभाव मिटाया ॥ ४ ॥ ९४ ॥ ४१७ ॥

साधो भाई सत विवेक दरसाया। यह निश्चा निरंबधन कहिये, संत शासतर गाया ॥ टेर ॥ तीन

लोक चेतनका चिलका, ज्यं रवि जल दरसाया अपणा स्वरूप रहे आकाशां, भूला जल भरमाया॥१॥ तुरिये आप तिमिर नहीं भासे, रजनी है सो माया ऐसी मेहर करी मोपे गुरु, दे दरपण दिखलाया॥ २ परीब्रह्म भरिया भरपूरण, ऊरण कवहुं न भाया। खंडत नहीं अखंड अविनाशी, ज्यां तिहुं काल विलाया॥३॥ काल अकाल भाव नहीं जामें, शुधस्वरूप सुखदाया। कही वनानाथ अलोगत सोजी, गुरुमुख ज्ञानी पाया॥ ४ ॥९५॥ ४२१ ॥

साधो भाई, धरूं ध्यान अव कैसा। किसकूं भजूं तजूं अव किसकूं, मँन्या अंचभा ऐसा ॥ टेर ॥ सुंन सायरकी आशा छूटी, चित मन भया उदासा। सुरता निरत हेर कर हारी, थकत भया घर पासा॥ १ ॥ आपा उलट अरु पड्या आपमें, ज्यूं काष्ठ अगन प्रवेसा। काष्ठ जली अगन भई परगट, फेर पड़े सोई वैसा ॥ २ ॥ निरगुण मांय थकत भया सगुण, नहीं कोई सेस असेसा। ज्यां दुई थकत अकथ अविनासी नित जंसाका तैसा ॥ ३ ॥ एको एक रह्या भरपूरा अनुभी भया हुलासा। कहै वनानाथ सुणो भा साधो, कृत्त अकृत्त न लेसा ॥ ४ ॥ ९६ ॥ ४२५

साधो भाई, आतम अचल अनासी। मायामांय लिंपै नहीं नभ ज्यूं, चतन स्वतैप्रकासी ॥टेर॥ इच-रज खेल कहूं वा घरको, गुरु मिलियां गमपासी। धरता नहीं अधर वो आतम, आपोई आप खासी॥१॥ अगम अगोचर निरभै कहियै, सो पद हैं अविनासी। हरख रु शोक विजोग न जोगी, नहीं आवे नहीं जासी ॥ २ ॥ अगम निगम वाको पार न पावें, कर परपंच थकजासी। सूक्षम रूप सदा भरपूरण,वो घर विरला पासी ॥ ३ ॥ वो तो दिष्ट मुष्ट नहीं आवे, ज्यूं गूंगो सैन चलासी। वनानाथ गुरुगम कहे दाखी,जाण हमारी ऐसी ॥ ४ ॥ ९७ ॥ ४२९ ॥

साधो भाई सत निश्चे कर हेरा। ब्रह्म मिल्यां विना भरम न भागै, समझावत गुरु मेरा ॥ टेर॥ तीन लोक रोक्या जमद्वारा, सकल कामना घेरचा। चित मन बुध हंकार अलूज्या, उलट हंस नहीं फेऱ्या ॥ १ ॥ पांच विसैकूं त्याग परेरा, रहो अंतैकरणसूं दूरा। आर पार चेतन जब दरसे, ज्यां कोऊ पहुँचे सूरा। ॥ २ ॥ आसण अधर सधर वो मूरत, अनिरवाच्य निरभैरा। सोभा कहूं समझ नहीं पूगे, थकत भया मन मेरा ॥ ३ ॥ आवागिवण आवे नहीं कबहु, किया

रहत घर डेरा। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, अबके मुजरा मेरा ॥ ४ ॥ ९८ ॥ ४३३ ॥

साधो भाई आतम अचल अभेसा। जिन जाण्या जिन या विध भाख्या, फेर कहे को कैसा ॥ टेर ॥ वां तो चंद सूर नहीं भासें, नहीं रजनी परकासा। वाकी महिमा कही न जावे, असंख भाण नहीं ऐसा ॥ १ ॥ परम पुरुस पारख कर परख्या, प्रगट कहूं हे जैसा स्वयंप्रकाश सदा एक सारा, वां कोई भरम न रैसा ॥ ॥ २ ॥ परब्रह्म भरीया भरपूरा, नहीं सिखर नहीं नीचा। आपोई आप दूसरा नाहीं, नहीं आगा नहीं पीछा ॥ ३ ॥ जैसा था जैसा दरसाया, अनिरवाच्य निरलेसा। कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, अगम निगम कहे ऐसा ॥ ४ ॥ ९९ ॥ ४३७ ॥

साधो भाई, मेरा ज्ञान अथाया। सुरती अरू सिमरती दोनूं, योई सिद्धांत बताया ॥ टेर ॥ घर नहीं गिगन अज्ञान न ज्ञाना, नहीं कोई सैन समाया। किरिया करम लगे नहीं कैणी, वो ज्यूं का त्यूं थाया ॥ १ ॥ निराकार निरगुण निरआसे, सगुण सुतै देखाया। ता सगुणमें भाव तिहूंविध, उतपति तिथि लय भाया ॥ २ ॥ चेतन द्रष्टा सब मायाकों, सबमें रहत अचाया। सब दिखलाय लिपै नहीं किसमें, नित चेतन निरदाया।

॥३॥ आतम सत असत अन आतम, यहै दोऊ भाव वताया । माया आदि अंत मध कलपत, आतम सत रैवाया ॥ ४ ॥ अपणी जांण आपही जांणै, विधि निषेध नहीं पाया । वनानाथ सत चेतन आनंद, निरविशेष निरमाया ॥ ५ ॥ १०० ॥ ४४२ ॥

साधो भाई, यहै निज ज्ञान हमारा । ध्याता ध्येय ध्यानमें नांहीं जांणें जाणनहारा ॥ टेर॥ अगमनिगम वाणी नहीं खाणी, नहीं आकार निराकारा । आपोई आप अनादी केवल, हुवा न को होवणहारा॥१॥ब्रह्मा विष्णु महेश्वर नांहीं, नहीं तिरगुण त्रिसतारा । चवदे लोक वहां कछु नांहीं, ना कोई विखे हंकारा॥२॥ वो तो लय विक्षेपता नांहीं, नहीं कोई सार असारा। नहीं कोई भूला नहीं समजणा, नित चेतन निरधारा ॥३॥ निरालंब निरभै निरवानी, हूं तूं नहीं विकारा । वनानाथ सनातन आतम, सुधा अद्वैत अपारा ॥ ४ ॥ १०१ ॥ ४४६ ॥

## राग आसावरी ।

साधो भाई, कहां लग कहैं वनाई। चेतन शुद्ध स्वरूप सदाई, ज्यामें भूल न काई॥ टेर ॥जाग्रत मिट्यां सुपन जब दरसें,सुपन सुखोपत मांई । तीनां परे तुरीया तत

कहिये, ज्यां कोई दूजा नांहीं ॥१॥ जाग्रतम सब जीव बराबर, सुपन मनोरथ पाई। जागत सुपन दोउ लीन सुखोपति; तुरीये जांणत ताई ॥२॥ सोहे आदि अंत मध पेला, तीनूं भाव देखाई। सबमें सांम सरोवर दरसें, वे बराबर तिनमांई ॥३॥ जो कहिये सोई भाव आपणा, बिना भाव कछु नांहीं। बनानाथ सोई परम प्रकाशी, मेरा भाव मुजमांहीं ॥ ४ ॥ १०२ ॥ ४५० ॥

साधो भाई, ऐसी अदल हलाई। नीर खीर ज्यूं किया निवेड़ा, यो हंस विवेक बताई ॥ टेर ॥ जाग्रत जीव पचै सब जगमें, इंद्र्यां करत कमाई। सब रस चाख करै मन मुतलब, आखर भवदुख पाई ॥१॥ सुपनसुभाव बरते जाग्रतयो, संकलप डोर हलाई। जाग्रत आन खड़ी सुपनामें, बरतत सुख दुख मांई॥२॥ जाग्रत सुपन कलपना थाकी, सुखोपतिके मांई। हरप शोक दुख सुख तां नांई, अप्रकाश रै बांई ॥३॥ तुरीये तेज भयो तिहुं बनमें, स्वप्रकाश सदाई। आर पार दीदार वोइ है, नहीं आवै नहीं जाई ॥ ४ ॥ चारूं अवस्था चींनकर जावै, जद हंसा फल पाई। बनानाथ है अवस्था उलंघत; द्रष्टा आप रहवाई ॥ ५ ॥ १०३ ॥ ४५५ ॥

साधो भाई, है कोई हरीजन शूरा। जाग्रत सुपन  तुरिया; भेद लहें जन पूरा ॥ टेर ॥ जाग्रत

ो ये जगतको, रजोगुण हंकारा। द्रगस्थान णी; विस्वे जीव विचारा ॥ १ ॥ सुपन अव-स्था सुख दुख वरतें, रहत सतोगुण आसा। कंठस्थान मध्यमा वांणी, तेजस जीव विलासा ॥२ अप्रमाण सुखोपति कहिय, गुण तमोगुण धारा॥ हिरदे स्थान पश्यंती वाणी, प्राज्ञ जीव आधारा ॥ ३ ॥ वाणी परा स्थान मूरधनी, तुरीये ब्रह्म अपारा। तिहूं अवस्था भेद न तामें, शिवस्वरूप इकसारा ॥४॥ अवस्था चार बताई हैं ज्यूं, योई है केवल ज्ञाना। अवस्था परे वनानाथ चेतन, जाणे सबका म्यांना ॥५॥ १०४॥४६०॥

साधो भाई, मेरी जाण अथाई। वायक अवायक दोइतें न्यारा, कहणी लगे न काई ॥ टेर ॥ पनरे तत जाग्रत अस्थूला, नवतत सुपन कहाई। सुखोपति सामान अविद्या, ज्यां जाग्रत सुपन विलाई ॥१॥ जाग्रतमें जागे नहीं चेतन, सुपने नहीं भरमाणा। सुखोपतीमें कबहु न भूला, नित चेतन निरवाणा ॥ २ ॥ जाग्रत सुपन सुखोपति मांई, रहे चेतन इकराया। वरते सो वेला सब जाणे, सो तुरीये निरदाया ॥ ३ ॥ हे ज्यूंका त्यूं योही निवेड़ा, यामें भेद न काई। वनानाथ सारांको द्रष्टा, अवस्था अतीत रवाई॥४॥१०५॥४६४

साधो भाई, धोके मुकती मानी। पिंड ब्रहमंडके अंतर बाहर, सो हमतें नहीं छांनी ॥ टेर ॥ कोई कहे

मुकती विष्णुधर्मतें, सगुण भगत बखानी। जीव बँध्या शुभ अशुभ करममें, यह सब कही भुलानी ॥१॥ कोई कहै मुकती नाभिकमलनें, अरध ऊरध ठहरेनी। आठ पोहोर स्वासामें पचणा, ऐसी क्या दुखदेनी ॥२॥ कोई कहै मुकती गिगनमंडलमें, अनहद घुरत निसानी। पिंजर छूटा हंस बिछूटा, जब कहा करो रहानी॥३॥ सब मांहि व्यापक सदा निरंतर, ज्यां नाम रूप नहीं वाणी। वनानाथ चेतनके माहीं, बंध मुकतकी हानी ॥ ४ ॥ ३०६ ॥ ४६८ ॥

## राग कानड़ा।

चेतन सब परकाश करे री, घटमायँ नभ ज्यूं नायँ कल री ॥ टेर ॥ पिंड ब्रह्मंड परे पुरस भारी, सो चेतन बिखरे न वणे री। उण चेतनसूं कुदरत सारी, सबघट मांहीं कला पसारी॥१॥ ज्यूं शशि दीसे जलके मंझारी, सबमें आप न लिंपे लिगारी। सतगुरु सैन समझकर सारी, सब घटमांयँ ब्रह्म लिया बिचारी ॥ २ ॥ पूरण ब्रह्म उरे न परे री, कारण लिंग स्थूल नहीं है री॥ नहीं वे बिछड्या नायँ मिले री, अगम निगम कहणी न लगे री ॥ ३ ॥ जीयाराम गुरु निज निरभे री, सचिदानंद आनंद अखे री। सोई वनानाथ द्रष्टा री, पलटया ऊठे सदा इकसारी ॥ ४ ॥ ३०७ ॥ ४७२ ॥

कारण सूक्षम स्थूल परै सो जी। यह निज ज्ञान आतम अनुभो जी॥ टेर॥ सूक्षम स्थूल कारण कर दोई, रसतें खांड खिलूणा ज्यूं होई। मिठास आरपार एकसारा, यूं चेतन परकासणहारा॥ १॥ खांड खिलूणा रस होयजावैं, मीठामैं तीनूं नहीं पावैं। यूं चेतनमैं उतपति नहीं लैता, आप सदा निरबंधण रैता॥ २॥ सदा एकसा सिमरथ वोई, ज्यां कछु बायक लगै न कोई। तुरीये अतीत अनादि अकरता, जांको भेद अभेद न करता॥ ३॥ लख अलख भाव तां नांहीं, नहीं कोई बाहर नहीं कोई मांहीं। बनानाथ अध्य अविनासी,आपोई आप स्वतैः परकासी॥४॥१०८॥४७६॥

सत चेतन आनंद गुसाईं, असत रू जड़ कलेश ज्यां नांई॥ टेर॥ पावक रहै पाहनके माहीं, विन चकमक परकासै नांहीं। अन आतम मांई आतमदेवा, विना ज्ञान पावो नहीं भेवा॥ १॥ अनुभौ ज्ञान उदै भया वोई, शम दम लिया साधना सोई। मेरा स्वरूप सोयं निरआसै, निजानंद निरमल परकासै॥ २॥ सब घटमांहिं वो चेतन प्यारा, रहै सब मांयँ सबीतैं न्यारा। आप अघटतां घटनहीं कोई,निरालेप निरबंधण सोई३॥ नहीं वो उरै परै अरु नीचा, नहीं कोई नैण खुला अरु मीचा। वचन उचार कहैं अब कांई, गूंगेकी गम गूंगे

माँहें ॥ ४ ॥ ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय नहीं लागें, नहीं कछु संगरे नहीं कछु त्यागें॥ वनानाथ निर्भय निज थाया; आपोई आप और नहीं पाया॥५॥ १०९ ॥ ४८१ ॥

अगम अगोचर अकथ कहांणी। वेद वचन अनुभौ तें जांणी ॥ टेर ॥ कारण सूक्षम थूल तुरीयातें, वृच्छा बीज पात ज्यूं तोयतें । तुरीये ब्रह्म तिहूंतें न्यारा, सारा खेल देखावणहारा॥ १ ॥ विछड़े मिले वर्ण मिटजावे, यह मायाका भाव कहावे । द्वैताद्वैत अद्वैत विलासा, भिनभिन कर मायामें भासा ॥ २ ॥ माया असत मृग जल झांई, नित चेतन ज्यूंका त्यूं सांई । वृच्छ अरु बीज नहीं तोयमांहीं, यूं माया चेतन मांहीं नाहीं॥३॥ आप अखे अगाध अजाया; भेद अभेद लगे नहीं दाया। वनानाथ चेतन निर्वाणी, आपोई आप अवरकी हाणी ॥ ४ ॥ ११० ॥ ४८५ ॥

चेतन जाण भूल दिखलावे । जाण भूलमें कवहुन आवे ॥ टेर ॥ आप अकलतें सकल पसारा, धर अंबर वणियाँ आकारा । रची भूल सोई भूल दिखावें, आप भूल मांहिं भूल न जावें ॥ १ ॥ चेतन आप सकल परकासें, चतनमांहि और नहीं भासें । मोरमुदा तां नहीं पावे, रहता सोई सकल दिखलावे ॥ २ ॥ ...ँ सरप भय आनी, यूं माया भूल अनहोत

मानी। रज्जुदृष्टमें भूल न कोई, द्रष्टा केवल रज्जु शुध सोई ॥ ३ ॥ ऐसी सैन लख संत कोई, और आपमें हुवा न होई। वनानाथ आतम है सोई; अगम निगम साखा कहे दोई ॥ ४ ॥ १११ ॥ ४८९ ॥

शुद्धस्वरूपका निश्चय योई। आतम ज्ञान उदे जिन जोई ॥ टेर॥ सुखोपती कारण है सबका,जाग्रत सुपन ताहीतें झबका। च्यार खांण चौरासी जाती; ज्यामें भूल रची बहुभांती ॥१॥ कारणमें वण वण मिटजाव, ख्याली खेलमें गया न आवें। हाण विरधमे करे न प्रीती, तुरीये चेतन सदा सुचेती ॥२॥ है है में वो हाथ न आवें, नहीं नहीं सु रहें निरदावें। हें नाहींके मध अनुभोई, निरमल चेतन द्रष्टा सोई ॥ ३ ॥ कारण कारज नाश भई माया,अज आतम अविनाशी राया। वनानाथ ये जांण प्रमाणी, शुद्धस्वरूप आप निरवाणी ॥ ४ ॥ ११२ ॥ ४९३ ॥

यह केवल निसचा है हमारा, हमही निरालंब निरधारा ॥टेर॥ मेरी सता कारण उपजाया। जाग्रत सुपन पसारा थाया। सृष्टि अनंत अनंत अवतारा, एक पलक मांहीं रचिया सारा ॥ १ ॥ सबी खेल ख्याली तें हूवा, आप रहत पड़दामें जूवा। उण ख्यालीतें सब विसतारा, कर बाजी बाजीगर न्यारा ॥ २ ॥

सूक्षम स्थूल सृष्टि यह दोई, कारणमें लाधै नहीं कोई, ये तिहूं हैं नहीं मृगजल सारा, आतम चेतन परखण द्वारा ॥ ३ ॥ विधि निषेध दोउ भरम बताया, मोमें विधि निषेध नहिं पाया। वनानाथ सोई अलख अपारा हम अरु जाण सदा इकसारा ॥ ४ ॥११३॥ ४९७ ॥

मेरी जाण सदा निरदावे, आदि अंत मधि तिहूं देखावे ॥ टेर ॥ मेरी सताकर सकल पसारा, नानाविध शुभ अशुभ व्यौहारा । सबमांहि सता परकासे ऐसें, सरवांमें रवि भासे जैसें ॥ १ ॥ सरवा अनंत रवि एक सोई, अनंत एकमें है नहीं कोई । मैं चेतन मो में नहीं माया, बोध बोधक सोई एक खाया ॥ २ ॥ ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय परहरीया, मेरेकूं कोऊ लगै न किरीया । नित निरमल निरलेप स्वरूपा, अगम निगम थकी कहत अनूपा ॥ ३ ॥ जाणी जाण देखाई ऐसी, ज्यांमें बंध मुकति कहो कैसी । वनानाथ योई अनुभौ हमारा, हाण लाभ कोउ नांहिं विकारा ॥४॥ ॥ ११४ ॥ ५०१ ॥

ख्याली खेल दिखावणहारा, रहता आप अकरता न्यारा ॥टेर॥ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, पांचतत्त्व कर ... यामें सृष्टि अनंत दिखलावे,सबतें ख्याली निरदावे ॥१॥ त्यागी आश्रम वरण व्यौहारा। यह

तिहूं खिलका मांहीं आकारा।प्रवृत्ती औरनिवृत्ती मांनी, सवी भाव खिलकैमें जानी ॥ २ ॥ वाजी झूठ वाजीगर साचा, सवही देखावें आगा पाछा । ख्यालीमें खिलका नहीं कोई, आप रहत ज्यूंका त्यूं सोई॥३॥ पुतली पिंपि तार विचारा, वाजी नाम रूप जड़ सारा। चेतनकूं जड़ कहा पिछाणें, वनानाथ वाजीगर जाणें ॥ ४ ॥ ११५॥ ५०९ ॥

## राग आसावरी।

साधो भाई इच्छा च्यार वताई। है ज्यूंका त्यूं किया निवेड़ा, रती वांक नहीं काई ॥ टेर ॥ इच्छा जीव दोड़ आसा लग, आरत में अलुझाई। नली नाल ज्यूं भटकत रीता, मिथ्या जन्म गमाई॥ १ ॥शुभ इच्छा सो वहें सुधमारग, अपणा खोज विचारें। निरगुण गहें गुण तीनूं त्यागे, सो सव काज सुधारें ॥ २॥ पर इच्छा परमारथ मानें, आप सवारथ मेटें। पोखें जीव ज्ञान दे पूरा, से सत सायव भेटें३॥ अन इच्छा सोई व्रह्मस्वरूपी, सरवज्ञ सकल पसारा। पाप पुन्य दुख सुख नहीं दर्से, नहीं कोई जीतन हारा॥ ४ ॥ द्वैत अद्वैत अकरता करता, इच्छा मांयें विलासा। वनानाथ इच्छा परे चेतन, आपोई आप निरासा ॥५॥ ११६ ॥५१०॥

साधो भाई गुणा अतीत अविनासी । आवे नहीं जावे वणे नहीं विखरें, निरमल स्वतःप्रकासी ॥ टेर ॥ ब्रह्म सदा निरबंधन कहिये, नहीं कोई इष्ट उपासी । धरम करमका करता नांहीं, अक्रिये अविनासी ॥ १ ॥ अक्रिय सोई आप स्वरूपी, क्रिया मायापासी । मायाकर दुरमतमें देखे, जां लग आसी जासी ॥ २ ॥ तीन गुणांका सकल पसारा, उतपति थिती विणासी । तिरगुणमें निरगुण निरबंधण, रहता आप अनासी ॥ ३ ॥ आप अखंड खंड सब माया, कर निरणै कहै दाखी । वनानाथ ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म है, अगम निगम यूं भाखी ॥ ४ ॥ ॥ ११७ ॥ ५१४ ॥

## राग ।

दोख परे ख्याली दोख परै, दोख दिखाय नहीं दोख गिरे ॥ टेर ॥ करता होय करी जग वाजी, सो मिसरतमें आण मिले। तम प्रकाश दोख आवृणतें, प्राज्ञ नामां जीव जल ॥ १ ॥ सँकलप पांच विसै होतांई, चित मन बुधि अहं तामें करे। तेजस जीव विछेप दोखते, सबी फोरणा होय उरे ॥ २ ॥ इंद्र्यामें सब रच्या मनोरथ शुभ अशुभ दोऊ करम गहै । विसवै जीव दोख मल , आप विसर आपो होय रहै ॥ ३ ॥ ख्याली दोख : खबरकी, सो सत असत विचार करें। सत सो

आप असत जड माया, तिं पडदोंऊ परकास परैं ॥४॥ आदि अरु अंत मध्य नहीं वाको, लग नहीं ज्ञाता ज्ञान गेहैं। सब मिटजाय सेस रहै वोई वनानाथ, सोई जांण रहैं ॥ ५ ॥ ११८ ॥ ५१९ ॥

## राग गूजरी।

लख चेतनता रहो जी, मनवा लख चेतनता रहो जी। अपणा रूप और होय भूला, कर रया हूंजी हूंजी ॥ टेर ॥ आप सुतें इच्छा कर दूजी, रची भूलता वाजी। जाग्रत सुपन सुखोपति तिहुंगुण, एक एक मांई राजी ॥ १ ॥ विसवे तैजस प्राज्ञ परखेतां, कर तुरीयातैं सोजी। आदि अंत मध्य एक आतमा, मेट दीना हूं तूं जी ॥ २ ॥ आतम अखै अमर अविनासी, ज्यां नहीं एक नहीं दो जी। येही ज्ञान निरभेद जाणकर, कहै दाखी निरभो जी॥ ३ ॥ जीयाराम गुरु मेहर करी सई, खोज बताया खोजी। वनानाथ स्वरूप पिछाण्यां, नहीं कलपना कोजी ॥ ४ ॥ ११९ ॥५२३॥

चेतन सब इच्छामें खेल देखाया। आप रहैं इच्छासूं न्यारा, इच्छामें नहीं आया ॥ टेर ॥ मेरी सता कर फोरी फोरणा, इच्छाई इंड उपाया। इंडा फोड़ रच्या धर अंबर, चवदेई लोक थपाया ॥ १ ॥ सातुई तवक,

इलाके आस, सातुं गिगन ठहराया। या मांहीं जीव जात वहुभांती, नानाविध भरमाया ॥ २ ॥ ख्याली खेल देखाय पलकमैं, मेट दीनी सब माया। फूटा कुंभ नभ रहत अचल यूं, बोधस्वरूप निरदाया ॥ ३ ॥ पांचतत्त्वकी नहीं मेरी काया, नहीं कोई जननी जाया। आदि अरु अंत मध्य नहीं मेरे, सत चित आनंद अजाया ॥ ४ ॥ फुरण अफुरण भाव नहीं मोमें, विधि निषेध न पाया। वनानाथ नित है ज्यूंका त्यूं, जाणी जाण रवाया ॥ ५ ॥ १२० ॥ ५२८ ॥

साधो भाई ज्ञान अज्ञान वताई। वाहर मुख फुरणा अज्ञाना, ज्ञान अंतरमुख आई ॥ टेर ॥ अपणा रूप आपही भूला, मायाकर भरमाई । मुकुरमायँ दूजा मुख दरसे, तज्या असल गही झांई ॥ १ ॥ जीव नाम मायाकर मान्या, भेद अनन्तां थाइ। नानारूप भावना नाना, कलप रह्या या मांई ॥ २ ॥ अपणी माया आप वंधाणा, जाणरही नहिं कांई। अपणा आप उलटकर देखे, तवी भूल मिटजाई ॥ ३ ॥ अनुभी ज्ञान जग्या अंदर, सत विवेक ठहराई। अपणा स्वरूप सदा केवल, माया अनित्य जताई ॥ ४ ॥ भूलमायँ ।८ । नहीं चेतन, जाण्यां वध्या न राई । वनानाथ ॥ चेतनकी, भूल अरु जाण वताई॥५॥१२१॥५२९॥

साधो भाई आतम ज्ञानी जोई। येही ज्ञान निरभै निरअंतर, कैणी लगै न कोई ॥ टेर ॥ नभमें अभ्र उपाधि पवनकी, वणें मिटें फिर होई। चित कलपी आतममांई रचना, अनहोती है योई ॥ १ ॥ अनहोते अनहोती मांनी, ज्यू सुपनी सुपनां जोई। जाग्यां पीछें सुपन कहां सुपनी, यूं बोधरूप निरभोई ॥ २ ॥ बोधरूप आतम नित चेतन, अज अद्वैत अलोई। कारज कारण नहीं आतममें, होत अनहोत न दोई ॥ ३ ॥ करण अकरण दोऊ तें न्यारा, नहीं कोई संग विछोई। वनानाथ अनामी आतम निरमल द्रष्टा सोई ॥ ४ ॥ १२२ ॥ ६३७ ॥

साधो भाई यह निरणा सुखदाई। चिदजड़ ग्रंथी कटी कलपना, शुध आतम दरसाई ॥ टेर ॥ तम प्रकाश आसरे नभके, नित आवे नित जाई। नभ निरलेप सदा इकसारा, श्याम श्वेत नहीं काई ॥ १ ॥ रवि ज्यूं सूक्ष्म परकाशा, थूल रात समथाई। चेतन नभ ज्यूं रहत निरंतर, नहीं आवे नहीं जाई ॥ २ ॥ दरपणके बाहिर सुख थूला, अंतर सुक्ष्म देखाई। दरपण ज्यूं चेतनके मांई, सूक्षम थूल न पाई ॥ ३ ॥ सूक्षम स्थूल जड चेतन माया, ज्ञान अज्ञान या मांई। वनानाथ अप्रमेय सोई आतम, ज्यां नहीं माया झांई ॥ ४ ॥ १२३ ॥ ६४१ ॥

इलाके आस, सातुइं गिगन ठहराया। या मांहीं जीव जात वहुभांती, नानाविध भरमाया ॥ २ ॥ ख्याली खेल देखाय पलकमें, मेट दीवी सव माया। फूटा कुंभ नभ रहत अचल यूं, वोधस्वरूप निरदाया ॥ ३ ॥ पांचतत्त्वकी नहीं मेरी काया, नहीं कोई जननी जाया। आदि अरु अंत मध्य नहीं मेरे, सत चित आनंद अजाया ॥ ४ ॥ फुरण अफुरण भाव नहीं मोमें, विधि निषेध न पाया । वनानाथ नित है ज्यूंका त्यूं, जाणी जाण रवाया ॥ ५ ॥ १२० ॥ ५२८ ॥

साधो भाई ज्ञान अज्ञान वताई । वाहर मुख फुरणा अज्ञाना, ज्ञान अंतरमुख आई ॥ टेर ॥ अपणा रूप आपही भूला, मायाकर भरमाई । मुकुरमाँय दूजा मुख दरसे, तज्या असल गही झांई ॥ १ ॥ जीव नाम मायाकर मान्या, भेद अनन्तां थाइ । नानारूप भावना नाना, कलप रह्या या मांई ॥ २ ॥ अपणी माया आप वंधाणा, जाणरही नहिं काई । अपणा आप उलट्या देखे, तवी भूल मिटजाई ॥ ३ ॥ अनुभौ ज्ञान जग्य उर अंदर, सत विवेक ठहराई । अपणा स्वरूप शुध केवल, माया अनित्य जताई ॥ ४
घटिया नहीं चेतन, जाण्यां वध्या
चोज चेतनकी, भूल अरु ज'

साधो भाई आतमज्ञानी जोई। येही ज्ञान निरभै निरअंतर, कैणी लगै न कोई ॥ टेर ॥ नभमें अभ्र उपाधि पवनकी, वर्णे मिटै फिर होई। चित कल्पी आतममांई रचना, अनहोती है योई ॥ १ ॥ अनहोतै अनहोती मांनी, ज्यूं सुपनी सुपनां जोई। जाग्यां पीछैं सुपन कहां सुपनी, यूं बोधरूप निरभोई ॥ २ ॥ बोधरूप आतम नित चेतन, अज अद्वैत अलोई। कारज कारण नहीं आतममें, होत अनहोत न दोई ॥ ३ ॥ करण अकरण दोऊ तें न्यारा, नहीं कोई संग विछोई। वनानाथ अनामी आतम निरमल द्रष्टा सोई ॥ ४ ॥ १२२ ॥ ५३७ ॥

साधो भाई यह निरणा सुखदाई। चिदजड़ ग्रंथी कटी कलपना, शुध आतम दरसाई ॥ टेर ॥ तम प्रकाश आसरे नभके, नित आवे नित जाई। नभ निरलेप सदा इकसारा, श्याम श्वेत नहीं काई ॥ १ ॥ रवि ज्यूं सूक्ष्म परकाशा, थूल रात समथाई। चेतन नभ ज्यूं रहत निरंतर, नहीं आवे नहीं जाई ॥ २ ॥ दरपणके बाहिर मुख थूला, अंतर सुक्ष्म देखाई। दरपण ज्यूं चेतनके मांई, सूक्षम थूल न पाई ॥ ३ ॥ सूक्षम स्थूल जड चेतन माया, ज्ञान अज्ञान या मांई। वनानाथ अ... सोई आतम, ज्यां नहीं माया झांई ॥ ४ ॥ १

साधो भाई; नहीं अंदर नहीं वारा । अंदर वार दोऊंको जांणें,ऐसा चेतन प्यारा ॥ टेर ॥ बीज वृच्छ पात फल पेला,नीर वृच्छसूं न्यारा। यूं आतम निर्वंधण कहिये, नित निरमल निराकारा॥१॥आदि पुरुषकी इच्छा शकति,बहुविध क्रिया पसारा। नाना भांति भावना मांडी,जुदा जुदा आकारा ॥२॥ चेतन साखी सकलँ सिष्टमें,व्यापक. निरहंकारा । पाप पुण्य सुख दुखसूं न्यारा, सबकूं जाणनहारा ॥ ३ ॥इच्छा आदि पसारा सबही, इंद्रजाल बिसतारा । इच्छा झूंठ सत आतम तत,यह विवेक ततसारा॥४॥ विधि निषेध भाव इच्छाका, इच्छा अलप असारा । बनानाथ सत चेतन आनंद, सोई स्वरूप हमारा ॥ ५ ॥ १२४॥५४६ ॥

साधो भाई आतम अखै अनासी । अपणी जाण आपही जाणें, अनुभौ स्वतै प्रकासी॥ टेर ॥ सिमरथ सदा काल है चेतन,ज्यामें इच्छा नांई। खंडत नहीं हूम राई भर, द्वैत अद्वैत न तांई॥ १ तिरगुण जाण देखाई रचना, सब इच्छाकें मांई। जडमें नाम रूप बहु भांती, आप निरंतर सांई ॥२ ॥ रवितें सकल जगतका कामा,बरतत भाव अनेका। यूं चेतन सारांको द्रष्टा, नितन्यारा निरभेका ॥ ३ ॥ माया अनित्य असार अनादी, ज्यूं तरु जर सरप दरारा,रज्जु ज्यूं सत

आतम सांई, नहीं मायागुण लिगारा ॥ ४ ॥ हे हे यों कहणी नहीं लागे,नहींनहीं कांहांपावे। वनानाथ सतचेतन आनंद,आपोई आप रहावे ॥५॥१२५॥५५१ ॥

साधो भाई,सतगुरु खेल रचाया। दावा कर दुनियां दिखलावे,आप रहे निरदाया ॥ टेर ॥ धरम करम करता होय कीया, पलमें जग दरसाया। चुंबक प्रतिबिंब तें लोहा, हिलता रहे यूंई माया ॥१॥ अनंत खेल एकण ख्याली तें , भांत भांत करवाया । रविप्रकाश जगतका कामा,करमां जोग हलाया ॥ २ ॥ सुख दुख मांहि रहे एकसारा, सिमरथ सदा अचाया । पाप पुण्य में लिपै न कबहूं, सो गीतामें गाया ॥ ३ ॥ ॥ पटपुतरीमें तार अलोगत, यूं मोहि गुरु दरसाया । वनानाथ कहे जीयाराम गुरु,रहे सबमें निरदाया ॥४॥१२६॥५५५॥

साधो भाई प्रगट वचन पुकारूं । असली जीव आरत कर आवें, तुरत उनीकूं तारूं ॥ टेर ॥ नेम धरम संसार भावना, नहीं जप तप धुन धारूं। अकल कलामें अहनिश आसण, सहजेई समरण सारूं॥ १ ॥ हदमें माया जाल पसारा, वेहद ब्रह्म विचारूं। दोई मेट दीदार दिखाऊं, या विध हंस उवारूं॥ २ ॥ वेहद ब्रह्म सदा निरबंधण, माया हद विसारूं। सोई स्वरूप हमारा कहिये, छेद्या भरम विकारूं ॥ ३ ॥ अंतर मेट

यूं नित रहै निरदावै ॥ ३ ॥ आतम चेतन प्रकासी, बोध शिवरूप सुखरासी । सोई वनानाथ निरवाणी आन सब मायाकी हाणी ॥ ४ ॥ १२१ ॥ ८७८ ॥

## राग सोरठ।

फकीरी महासूरनकी सूर । विसै भाव तज्या हंकारा, करी कलपना दूर ॥टेर॥तज हंकार सबी मोह ममता,हुवा जगतसूं दूर । फिकर फकीर तज्या तन मनका, ले वैराग करूर ॥ १ ॥ राज भोग इंद्रादि लेके, सबकूं जांण्या कूर । कण वस्तु,इनमें नहीं कोई, तज्या फकर लख डूर ॥ २ ॥ नव निधि सिद्धि चौवीस फकरके, हाजिर खड़ी हजूर । फकर तजी झूंठी कर इनकूं, परस्या सत चित नूर ॥ ३ ॥ जीयाराम मिलया गुरु पूरा, दिया ज्ञान निज मूर। वनानाथ निरख्या निज नैणां, जाल्या विखे अंकुर ॥ ४ ॥ १२२ ॥ ८७९ ॥

फकीरी रहत निचिंत सुदेस ।देखण सुनन कहणसूं न्यारा, चेतन फकर हमेस ॥ टेर ॥ सतगुरु मेहर करी मुझ सेती, दिया ज्ञान उपदेस । सोई ज्ञान श्रद्धा कर लिया, तजिया देस विदेस ॥ १ ॥ जो जो रूप बंधे सोइ थूला, उरे अरु परे मवेस । चवदे लोक इकीसूं ब्रहमंड, यह सब सगुण देस ॥ २ ॥ रंग रूप नहीं आकारा, पकड़ छोड़ नहीं धेस । अप्रमाण अरु सुन ...ना, निरगुण कहिये विदेस ॥ ३ ॥ देस विदेस भाव

यह दोनूं, मान्या मन हमेस। तीक्षण खडग ज्ञानका ग्येही कर, मार्‍या मन नरेस ॥४॥ द्वैत भाव होता मन करके, सो मन रह्या न लेस।जीयाराम गुरु केवल चेतन, वनानाथ सोई सेस ॥ ५ ॥ १३३ ॥ ५८४ ॥

फकीरी निश्चल पद अग्याद। सोई लख्या ज्याकूं लगे न वाणी, निगम कैत यूं अनाद ॥ टेर ॥ निसदिन फकर निरत कर निरख्या, निज आतम लिया सार। आतम सोई रहत परिपूरण, आपोई आप अपार ॥ १ ॥ सूक्षम रूप परम परकासी, ज्यां नहीं थाप उथाप। रेता अगम अगोचर अविगत, नहीं तिरगुण त्रयताप ॥ २ ॥ उण सिमरथके एक रोमते, ब्रहमंड रच्या अनेक। ता ब्रहमंड में भाव किया नाना, सवी देखावे देख ॥३॥वाहर भीतर सधर पुरुष है, ज्यूं घटमठ आकास। माया घट मठ भेद न ज्यामें, नभ ज्यूं ब्रह्म थिरवास ॥ ४ ॥ वुद्धि न जान सके आतमको, मनको थकत उचार। कथ कथ गिरा थकत भई वाणी, कोऊ लेसके न पार ॥ ५ ॥ भाव अभाव नहीं आतममें, नहीं उनमेप निमेप। वनानाथ आतम ज्यूंका त्यूं, नहीं कोई भेख अभेख ॥ ६ ॥ १३४ ॥ ५९० ॥

फकीरी यह निज परम विवेक।कोऊ कैसके न आपका र,जांणत आप अलेख ॥टेर ॥ अनुभौ सदर फकर

का आशय, ज्यां नहीं आन उपाद। सो निज आप आतम अविनासी, रहता पुरुष अनाद ॥ १ ॥ ज्याकूं लगे न भाव अकरता, तां करताको पात। अकरण करण भेद नहीं ज्यामें, को कोऊ लखे लखात ॥ २ ॥ एक अनेक वचन क्या वरणै, ये वे वंधे न ज्ञात। सो अज्ञात वेद कहे नेती, वचनां अतीत रहात ॥ ३ ॥ निकट न दूर गुप्त नहीं प्रगट, नहीं कोई वांण अवांण। वनानाथ ह सो है सोई, येई सनातन जांण॥४॥१३५॥५९४॥

फकीरी ब्रह्मज्ञान सोई ज्ञान, और ज्ञान माया मांई नाना, जिनकूं मिथ्या जान ॥ टेर॥ नहीं कोई साच झूठ वा मांही, वो आदी पुरुष अदेस। इच्छा कर वहु भाव देखावे आप निरंतर वेस॥१॥ माया सव चेतनके आसै, उपजै मिटै हमेस। चुंवक अचल चलै सोई लोहा, यूं जड़ चेतन देस ॥२॥ चेतन अखे सवी खै माया, यह निज कहिये विवेक। आप सदा है ज्यूंका त्यूं ही, ज्यां नहीं माया रेख॥ ३ ॥ प्रमाण अप्रमाण नहिं ज्यां माया नहीं कोई एक अनेक। वनानाथ सोई है निज चेतन, नहीं कोई भेख अभेख ॥ ४॥१३६ ॥५९८॥

फकीरी केवल ब्रह्म विचार। सत असतका किया निवेड़ा, तजी असंत सतधार॥टेर॥ जाग्रत सुपन सुखो पति कहिये, यह तीनूं गुण देख। उतपति स्थिति ल

तिरगुण में, तुरीये जाण अदेख॥१॥नहीं उतपति परलामें आवे,तुरीये ब्रह्म सुदेस। सब दिखलाय आप रहे न्यारा, नित निकलंक निरलेस ॥ २ ॥ जाग्रत सुपन सुखोपति माया, ये जड असत कलेस। तुरीये सत चित्त आनंद अखंडी, तां नहीं तिरगुण लेस ॥ ३ ॥ तुरीये अतीत सोई है तुरीये, साखी प्रेरक एक। वनानाथ सोई शुध चेतन, नहीं कोई लेख अलेख ॥४ ॥ १३७॥६०२॥

बंगला सोवन सिखरके वीच,जामें वाजा वाजें छतीस ॥ टेर ॥ इस बंगलेकी सधर नीव है, धिन सतगुरु दीवी सीख । जाग्रत सुपन सुखोपति समजो, पोलां तीन तैकीक ॥ १ ॥ इस बंगलामें अखंड जोत है, नहीं उष्ण नहीं शीत । क्रोड भानु रोमकी शोभा, वो तुरीये तत्त्व अजीत ॥२॥ इस बंगलामें आप विराज्या, अधर दलीचा वीच। समरथ सांम सबीका मालिक,महा भीचनका भीच॥३॥जीयाराम मिल्या गुरु पूरा,जद भेट्या जगदीस । वनानाथ विगत कर भाखी, लख्या संत सोई ईस ॥ ४ ॥ १३८ ॥ ६०६ ॥

जागनेमें जोयो रे ,सिमरथ सत सबली । जांणे नहीं देउला रे, ज्यांसूं आवागिवण टली ॥ टेर ॥ प्रेम पियाला सतगुरु पाया,पीवत पारख पड़ी। अजब झरोखे आप विराजें,निरखे निरत खड़ी ।तांती झारी लागी रे,

तनड़ामें तार रली ॥ १ ॥ अणी अगर पर अंदर दली-
चा, ज्यूं झलकत चंद्रमणी । दवादस ऊपर दरस्यो
दिवाना, सोहं मांझो सांम धणी। वालो मोय लागे रे,
ज्यांसूं हारी सुरत मिली॥२॥गिगना गाजे अनहदवाजे,
छत्तीसूं साज सुरी । वेगम वाणी विरलां जाणी, जीत
निसाण वुरी । धोका नांहीं रे,लाधी मोय मोख गली३॥
पूरण पाया सुंन समाया, एकोई एक हरी । वनानाथ
गम जांणी जुगत कर ,भरमांरी भींत गिरी । दरसण
पाया रे, झिलमिल जोत जली॥४॥१३९ ॥ ६१० ॥

अज अविनासी रे,सचिदानंद अख रे। नितही प्रापत
रे,नहीं वो जन्में मरे ॥ टेर ॥ अरथ धरम अरु काम
मुकतफल,स्वरग नरक विसतार। आतम सत्री भावतें
न्यारा, खेल खेलावणहार । आप निरबंधण रे, नहीं
कछु त्यागें न संगरे ॥ १ ॥ जैसे नभ व्यापक घट
मठमें, निरालेप एकसार । यूं चेतन सारांको द्रष्टा,
निकलंक थया अपार। सिमरथ ऐसा रे, सुते प्रकाश
करे ॥ २ ॥आतमको परमाण न आवे,अप्रमेय निरा-
कार। वां न प्रमाण प्रमाता न प्रमेय,नहीं हलवा नहीं
भार । कह्या नहीं जावै रे,अगम निगम करे॥३॥ ज्यां
कोई ज्ञान ज्ञेय नहीं ज्ञाता, नहीं ज्यां साधन लिगार।
निजस्वरूप अगाध अनादी, अद्वय चेतनसार।वना-
नाथ सोई रे, निरभौ नित अगिरे॥४॥१४०॥६११।

निज तत्व ऐसा रे,परतक जाण्यां सई। लागै नहीं क्रिया रे, नित निरवाण रई ॥टेर॥आतम ज्ञान खुल्या निज चसमा,है ज्यूं किया निरधार। करताकरम नहीं आतममैं,अक्रिय इकसार। पार नहीं वाको रे, ज्ञानीजन सार लई ॥ १ ॥ देखण कहण सुणन सव माया, इ मंनको विसतार। भावाभाव अभाव तिहुंविध, यामैं कलपणहार। आतम द्रष्टा रे, यामैं कछू लिपत नहीं॥२॥ मन माया आतम मांहि झूठी, ज्यूं नभमैं लील असार। मिथ्या तजी सत किया संगरै, वेदा नहीं लिगार। आतम परचै रे, दुरमत दूर भई॥ ३ ॥ येही ज्ञान कहिये तत सारा, जांणै संत विचार। वनानाथ अनुभौकी सोजी, परगट कही पुकार। जाण आ साची रे, अगम अरु निगमं कई ॥ ४ ॥ १४१ ॥ ॥ ६१८ ॥

आप सत जाण्यां रे, निकलंक निरभोई। निरगुण सोजी रे, अनुभौ ज्ञान योई ॥ टेर ॥ आप अनामी नामसूं न्यारा, उनसैं भया सव नाम। पुरुप प्रकृति तिरगुण पंचतत, ठाया यह ठामों ठाम। इनमैं रचना रे, विधि वहु भांत होई ॥ १ ॥ कारण माया कारज विसवे, है वाके आधार। कारण कारज जड़ है दोनूं, वोई चेतावणहार। सवको द्रष्टा रे, अकरता अलख सोई ॥ २ ॥ सव घटमैं चेतन परकाशी, ज्यूं सरवां मांई

सूर। रहे सबमाँय लिपै नहीं किसमें,सो नित केवल नूर। निरंतर थाया रे, शुभाशुभ नहीं ज्यां दोई ॥३॥ गुणा अतीत त्याग नहीं संग रे, नहीं हलवा नहीं भार। वनानाथ आतम है सोई, नहीं कारण कारज लिगार॥ आप निरवाणीरे, लगै नहीं वाण कोई ४॥१४२॥६२२॥

सिमरथ सोईरे,ज्यांमें कछु दूजा नांई।दूजा कहां पावे रे,वंझ्या पुत्र देख्या कांई ॥टेर॥ आतम ख्याली ख्याल देखाया, इंद्रजाल आकार। जो दीसै सो है सब माया, आप देखावणहार। निरंतर थाया रे, द्रष्टा आप सई॥१॥ आगेई हतो अबहे सोई, ऐसी तिहूं कालमें एक सार। भूत भविष्यत वरतमानमें, चेतन लिपता नहीं लिगार। अनादि आतम रे,ज्यां तिहूं काल नई ॥ २ ॥ आतम चेतन स्वतेप्रकासी, नित निरगुण निराकार । ज्यांमें ध्यान ध्येयनहीं ध्याता, अध्यय आप अपार।पार नहीं आवे रे, अगम निगम कथके रई ॥ ३ ॥ हेती नेती भाव न ज्यांमें,नहीं कोई जीतनहार । वनानाथ सोई स्वरूप हमारा, नहीं कोई दिरस विकार।सूज आ छागी नित निरभेद सई ॥ ४ ॥ १४३ ॥ ६२६ ॥

रवी ज्यूं चेतन रे, स्वतै परकाश कीयां।रजनी माया नहीं कोई तिमर तीयां ॥ टेर ॥ अधिष्ठान चेतनके ...,मन कल्पत विसतार। चवदे लोक इकीस ब्रह्मंड,

इनमें भेद अपार । शुभाशुभ वरते रे,सुख अरु दुख ई-यां॥१॥नित चेतन निरवांण अचाइ, वो सबमें निरभेद। जल डूबै न जलै पावकमें, ससतर सकै न छेद।भेदै नहीं कोई रे, उतपति परलै हूयां ॥ २ ॥ चेतनमें मनमाया नांहीं, नहीं विधि निषेध उपाद । अनिर्वाच आप निज चेतन, नहीं वाको अंत न आद । मध्य नहीं कोई रे; रहै सही जाण लीया ॥ ३ ॥नहीं कोई करता नहीं कोई अकरता, ज्ञान अज्ञान न कोय।वनानाथ शुद्ध स्वरूप हमारा, नहीं एक नहीं दोय । अनुभौ योई रे, लख्या सत्र संत ईयां ॥ ४ ॥ १२३ ॥ ६३० ॥

भूमिका सातूं रे, है ज्यूं निरणें कियां । ज्ञान निज योई रे,वेद संत साख दीयां ॥ टेर ॥ शुभ इच्छा अरु शुभ विचारणा, तनुमानसा तीन । स्थूल शरीर अवस्था जाग्रत,लखै संत परवीन । शुद्ध स्वरूप परसै रे,मनको प्रतिहार कीयां ॥ १ सत्वापती भूमिका चौथी, सुपन अवस्था जान । आतम जग दोऊं दरस्या भलीविध, अनुभौ उदै भया ज्ञान । लहर जग जाण्या रे, आतम नीर थयां ॥ २ ॥ सुखोपती अवस्था कहिये,ज्यां छूटा तन अभिमान । असंग सगति भूमिका पंचमी, शुद्ध स्वरूपी जान। संगकर रहित रे, निरभै पद लीयां॥३॥ नाम रूप पदारथ सबकी, बुद्धि मांयें पिछाण । छठी

भूमिका तुरिये चेतन, ज्यां शुध पदारथ हाण
ज्यूं चेतन रे, तिमिर नहीं लेस तीयां ॥ ४ ॥
अतीत भूमिका सप्तमी, चेतन शुद्ध स्वरूप
अभाव नहीं ज्यां मांइ, सोई वनानाथ अनूप।
केसी रे, द्रष्टा आप जीयां ॥ ५ ॥ १९५ ॥ ६

जथारथ जाण्या रे, खोजी खोज कीयां।
भाखी रे, कही सब संत ईयां ॥ टेर ॥ श्रवण स
नकी शाखा, सुण कर किया विचार। निरगुण
भात्र अनादी, यह श्रवणकी सार। प्रेमसूं परसे
रस हेत लीयां ॥ १ ॥ मनण जथारथ मान व
सत मिथ्या ली ? सार। निरगुण अखे सबी सगुण
मन लीनी धार। सार सतगुरुकी रे, जोई जुग
॥ २ ॥ निदिध्यासन काष्ठ ज्यूं माया, मथणी
अभ्यास। काष्ठ जली अगन भई परगट, यूं चेत
कास। रवी ज्यूं थाया रे, नहीं कोई तिमिर तीयां
साक्षातकार सदा शुध केवल, ज्यूं कंचन पर
भूषण नाम नहीं ता माहीं, विनमाया ब्रह्म अपार
नहीं वाको रे, है ज्यूं जांण रीयां ॥४॥ श्रवण मन
दिध्यासन करके, साक्षात किया है विचार। वन
द्रष्टा है सबको, सबकूं जाणनहार। भेद नहीं क
आप जीयां ॥ ५ ॥ १९६ ॥ ६४

## राग।

वचन मत सांभलो सई रे,साधो नित निरगुण निराकार ॥ टेर ॥स्वर्ग मृत्यु पाताल लोक ये, रह्या भूलकूं धार । असत जडमें कलपत सवही, कर रया संत पुकार ॥ १ ॥ वेद संतकी साख समझकर, निज आतम लिया सार । ता आतमके सवी आसरे, सवकूं प्रेरणहार॥२॥ सकल सृष्टिमें आप अचाई,लोचन अनंत विचार। सत चित आनंद आप एकसा, ज्यामें नहीं संसार ॥३ ॥ आगम निगम वाणी नहीं लागे, ज्यां सब थकत उचार। वनानाथ मैरम के मांई; लखरया अलख अपार ॥ ४ ॥ १४७ ॥ ६४४ ॥

## पद सिद्धांतका–राग।

. वाक्य ये सिद्धांतका सई रे,साधोसुरती करत पुकार। ॥ टेर ॥ आर पार वाको नहीं आवे, सोहैं अगम अपार आदि अंत मध्य तीनु वामें, पावे नहीं लिगार ॥१॥ सो आतमकी पलमें सृष्टि, हुऐ मिटे केई वार । आप अचल सवहीको द्रष्टा, साखी जाणनहार ॥२॥ कारण मिट्यां कारज कहां पावे, यह वह सवी असार। हैं ज्या में वायक नहीं लागे; यही जाण निरधार ॥३॥ एकरु दोय अनेक न वामें, नहीं हलवां नहीं भार। वनानाथ कोऊ ज्ञात न वंधे; येही हमारी मार॥४॥१४८॥६४८॥

## राग।

साधो भाई सवको द्रष्टा सांई। चारूं भाव सत्ता दिखलावे; आप सत्ता दुई नांइ॥ टेर॥ निरालेप निरगुण आदि तां, उतपति विसवे नांई। कंचनमें आभूषण इच्छा, प्रागभाव ओलखाई॥ १॥ वस्तु एक अनंत घट वातें, गुण किरिया जुई जुई। लोहा एक अनंत भया ससतर, भाव अन्यो अन्य हुई॥२॥ सूक्षम स्थूल लीन कारणमें, जो ज्यातें हुवां जांई। बुद-बुदा फेन तरंग जलमई, यूं भाव प्रध्वंसा मांई॥३॥ उतपति थिती लय नहीं तामें, सो तुरीये दरसाई ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय नहीं लागै, भाव अत्यंत कहाई॥४॥ भाव अभाव सदा कलपत युंइं ज्यूं मृगत्रिसना झांई। आप सदा है ज्यूंका त्यूंई, भाव अभाव न कांई॥५॥ कहिवो चेतन सुनवो चेतन, दर्से चेतन सोई। वनानाथ जाणे सोई चेतन, चेतन विनां न कोई॥६॥१४१॥६६४॥

साधो भाई शुद्धस्वरूप अपारा, मन बुद्धि वाणी नहीं पहुंचे, आपही जाणनहारा॥ टेर॥ जाग्रत सु- सुखोपति तुरीया, धरी अवस्था चारूं। सबमें निरंतर वासा, रवि ज्यूं कला पसारूं॥ १॥ ग्रत सुपन सुपोपति तीनूं, तुरीय करके थाया। ज्यूं मध्य सुमेरू, रजनी वांकी छाया॥ २॥

रजनी माँयँ भेद दोय हूवा, न्यून विशेपही ठाना ।
तारा न्यून विशेप चंद्रमा, रजनी मांय समाना ॥३॥
जाग्रत जाण न्यून तारां सम, चंद ज्यूं सुपन विशेषा।
सुपोपति रजनी ज्यूं कहियें, अपरकाश हमेसा ॥ ४ ॥
न्यून विशेप समान तिहूंविध, यह चित मानी सारी
तुरीये चित्त सुमेरू ज्युंई, तिरगुणका हंकारी ॥ ५ ॥
चित हंकार सुमेरू जाणियें, जिन तिहुं भेद दिखाया।
नित चेतन परकाश रवीज्यूं, चित सुमेरू नहीं माया
॥ ६ ॥ अवस्था अतीत सदा निरबंधण, नहीं अवस्था
काई । बनानाथ आपकी निश्चै, कर निरणै दरसाई
॥ ७ ॥ १५० ॥ ६६१ ॥

## राग ।

यह केवल सिद्धांत हमारा, कहै वेदांत संत जन सारा ॥ टेर ॥ मैं हूं अगम अगोचर राया, आदि अंत मध्य नहीं मेरे काया । पाहनतें पुतरी कहा न्यारी, मेरी सत्ताकर सृष्टी सारी ॥ १ ॥ पुतरी नाम कहणका होई, पाहनमें पुतरी नहीं कोई । यूं आतममें जग नहीं पावै, आतम अचल गया नहीं आवे ॥ २ ॥ हुई मिटी सोई माया नीसाणी, जैसें मृगतृष्णाका पाणी । कलपत भाव अभाव कहाया, हम द्रष्टा कोउ गया न आया ॥३॥ मेरी जाणका आर

नहीं कोई मिल्या न न्यारा ॥४॥हेती अरु नेती नहीं ज्यामैं; दोऊं वचनकी हाणी। वनानाथ आपकी सोजी, चेतन आप पिछाणी ॥ ५ ॥ १९७ ॥ ६९० ॥

साधो भाई, आतम अचल अनइच्छया। शुद्धस्वरूप अरूप आप तां, बंध मोक्ष नहीं वंच्छया ॥टेर॥ जलमें जोय उपाधि पवनकी, तरंग बुदबुदा फेना। यूं आतममें इच्छाईतें, भाव तिरगुणका माना॥१॥तमगुण ब्रह्म. सतोगुण ईश्वर, रजोगुण जीव कहाई। ये तिहुं उतपति खपतिमें सैमल, यामें आई जाई ॥२॥ जीव ईश ब्रह्म असत अनातम, सत आतम निरदाया। ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय तां नाहीं, सत चिद आनँद अथाया ॥ ३ ॥ आतम स्वतें देखाई इच्छा,ज्यूं मृगतृष्णा झांई। इच्छा भाव अभाव तिहूं विध, सो आतम में नांई ॥४ ॥हे है कहतां नहीं आकारा: नहीं नहीं कां निराकारा। वनानाथ है अचल अपरोक्ष, स्वतें प्रकाशित सारा ॥ ५ ॥ १९८ ॥ ६९५ ॥

साधो भाई चेतन द्रष्टा सोई। चम सम दिव्यदृष्टि तां नांई, एक दोय नहीं कोई ॥ टेर ॥ तरुजर सरप दरार रज्जुतें, रजनीमें भरमाणा। यूं आतम अज्ञान दृष्टतें, तिरगुण थाप बंधाणा ॥ १ ॥ तीनूं भेद भया मायामें, न्यून विशेष समाना। जाग्रत न्यून.

सुपन विशेपा, अरु सुषोपती समाना ॥ २ ॥ विसवै जीव अज्ञान आचरण, सो जाग्रत ही लेखा। तरुजर भरम ज्यूं जीव जान्या, चम दृष्टिकर देखा ॥ ३ ॥ तेजस जीव अरु ज्ञान आहारा, सोई सुपन कहाई। अहिभरम ज्यूं जीव वखाना, दिव्य दृष्टि ये थाई॥४॥ प्राज्ञ समान भोग विज्ञाना, सुखोपति कहिये सोई। भूमिदरार भरम ज्यूंई जीव है, समदृष्टि है सोई ॥५॥ रज्जुदृष्टि ज्यूं आतम चेतन, अनुभौ भाण प्रकासा। विश्वै तैजस प्राज्ञ विलाना, सत आतम निरआसा ॥ ६ ॥ द्वैताद्वैत नहीं आतममें, शुद्धा अद्वैत अपारा। वनानाथ सोइ अनिरवाच्य है, आपही जाणनहारा ॥ ७ ॥ १६९ ॥ ७०२ ॥

ज्ञान गुरुदेवका सही रे साधो, लख्या सोई भवपार ॥ टेर ॥ संतगुरु मोरी सुणो वीनती, अरज करूं करतार। भयसिंधूसूं करो कनारे, निराधारां आधार॥१॥ लखचौरासी जीवाजूनमें, फेरा फिरया अपारा में शिष्य शरण तुम्हारी आया, अब मोय लेवो उवार ॥ २ ॥ ... लगी गुरु मेरे, एक एक अधिकार। ज्ञान ... दया कर, काट होऊं भवपार ॥ ३ ॥ ... सृष्टिमें नाहीं, ऐसो कोउ दातार। वंद... , सोई निश्चा लिया धार ॥ ४ ॥

गुरु किरपा हुवे ज्ञान परापत, छूटै सबी विकार। बंधन कटै होवे निरबंधन, पावे मोक्ष दुवार ॥ ५ ॥ केवल ज्ञान दिया गुरु हमकूं, जाण्या सार असार। आतम सत असत अनआतम, परख किया निरधार ॥६॥ सतमें स्थिती असतकी हाणी, निश्चै योई विचार। सतगुरु मिल्यां ऐसी विधि सूझे, परगट कही पुकार ॥ ७ ॥ जीयाराम गुरु पर उपकारी, दातारां दातार। सो सीधा सो सतगुरु करके, वनानाथ कही सार ॥८॥ १६० ॥ ७१० ॥

## राग।

साधो भाई अपणा आप अथाया। मायागुण किरियाको द्रष्टा,सो कहूं गया न आया॥टेर॥सत चित आनंद आप अखंडी,तातें अंस फंटाया। एकतें जीव अनेक वनायके, माया किया मन भाया॥ १ ॥ सोई माया मूल अविद्या, तामें तिरगुण थाया। सतगुण ज्ञान अज्ञान रजोतम, निज ज्ञान निरदाया ॥२॥ जब लग निज ज्ञान नहीं प्रापत,तबलग बहु दुख पाया। न्यून विशेष समान गुणमई,धरी अनंतां काया॥३॥उलटा अंश पलट मायातें,अपणा ज्ञान जगाया। मायाजाल छेद भया न्यारा, दूजा भेद मिटाया ॥ ४ ॥ आतम अंश सोई परमातम, शुद्ध अद्वैत अजाया। अपणा स्वरूप

सदा ज्यूं का त्यूं,ज्ञान अज्ञान न माया ॥५॥ निज पद शुद्धसनातन द्रष्टा,आपोई आप रेवाया। वनानाथ निरवाणी वाणी, परतक कहैं दरसाया॥६॥१६१॥७१६॥

साधो भाई मायामें द्वैत विलासा। अनहोती होती भई माया, ज्ञान भयां हुवे नासा ॥ टेर ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश ईश्वरी, यां मिल जाल पसारा। सब जीवनपें जाल डारके, गिरिया जीव अपारा ॥ १ ॥ तीन गुणां मांई जीव अलुज्या, उतपति स्थिति ह हाणी माया भूल इनीका कारण, सब जीवनकी खाणी ॥२॥ पाव पाताल सीस आकासां, उदर दसूं दिस छाई। माय जीव किया अपणे वस, बार जाणदे नांई ॥ ३ ॥ एव उपाय माया छूटणकी, गुरु सरणे चल आवे। गुरु ह ज्ञान देवे निजपदका, माया जाल मिटावे॥ ४ ॥ वेद वचन गुरु जुगती करके, सरवण सबद सुणाया मन मनन निदिध्यासन करकें, सुध साक्षात लखाय ॥५॥एक अनेक जीव मायातें, ज्यूं रवि विंब अनेका। माया घट जल भेद विलाया, ब्रह्म जीव सोइ एका ॥ ६ ॥ शिव विष्णु ब्रह्मादिक वंछें, निश्चल पद निरदाया। जीयाराम गुरु सूं ले जुगती, वनानाथ पद पाया ॥ ७ ॥ १६२ ॥७२३ ॥

समज्या संत परमपद परस्या, जां लग पहुंचत सूरा।

आदि पुरुष ओलख्या अंदर, हरदम सदा हजूरा॥ टेर॥
परथम आदि पुरुष अविनासी, जां तिरगुण नहीं माया।
रचना विना ब्रह्म निजनामी, आपोई आप रवाया॥१॥
सो निरभेद भेद नहीं तामें, नहीं कोई वाद विवादि,
उण समरथका ज्ञान अपारा, पुरुष पुरातन आदि॥२॥
आदि पुरुष इच्छा शक्ती सूं, रचीया जगत पसारा।
समज्या सो सत शबदां लागा, भरम बंध्या जग सारा
॥ ३ ॥ आरंभ आद अमावस रचिया, सुरत सबद घर
लाया। अपणा नूर निरंतर निरखो, निरमल निरगुण
राया ॥ ४॥ पडवा पवन पिछाण्या पागी, अरध उरध
लिव लागी। उलटी कला अखंड उजवाला, जोत
दसूं दिस जागी ॥ ५ ॥ बीजो बीज ऊगीया चंदा,
निवण करै नव खंडा। दिनदिन कला सवाई दरसें,
आप बहें ब्रहमंडा ॥ ६ ॥ तीजमें तार लगी त्रीवेणी,
शबद चड्या टंक साला। हीरा चोट सहे सिर धणकी,
यू दृढ मत गुरुका वाला ॥ ७ ॥ चौथमें चहुं दिस
भँवर गुंजाया, गिगनमंडल गरणाया। वारोई मेघ
मलार उलटकर, विरह वादल वरसाया ॥ ८ ॥ पांचम
पुरुष पींजरै पूरा, सुंन घर पूगा सूरा। सैंस कली पर
करत किलोला, वाजत अनहत तूरा ॥ ९ ॥ छठम
अटल विरछकी छाया, गरज्यो गिगन सवाया।

मोरचा आंब मुकत फल लागा, सुघड सुवै चड़ खाया ॥ १० ॥ सातम छोड खलक्की आसा, आसा भई निरासा। अदर दलीचे आप विराजै, जां नहीं काल तिरासा ॥ ११ ॥ आठम अचल ब्रह्म अविनासी, वार पार नहिं कोई। नित निरलेप लेप नहिं लागे, ज्ञानीकी स्थित सोई ॥ १२ ॥ नवमो नाथ निरंजन राया, अंजण दरसे माया। आप सदा माया विन थाया, लखे संत निरदाया ॥ १३ ॥ दशम दसूं दिशा पर देवा, सुर नर वाकी सेवा। सकल निरंतर व्यापक सांई, ऐसा अलख अभेवा ॥ १४ ॥ एक इग्यारस एकुंकारा, जीव ब्रह्म एक सारा। दुई विना दूजा नहीं दरसे, सब घट सिरजणहरा ॥ १५ ॥ बारस बावन अक्षर वाहिर, पारब्रह्म थिरथाया। सो ब्रह्म लख्या वक्या निज अनुभौ, परगट भाप सुणाया ॥ १६ ॥ तेरस तोल मोल नहीं आवे, कैणी लगे न काई। जाणी जाण रहा एकसारा, शुद्ध स्वरूप सुखदाई ॥ १७ ॥ चवदस चार वेद खट सासतर, गीतामें यूं गावे। एको ब्रह्म नासति दुतिये, साख सुण्यां पत आवे ॥ १८ ॥ पूनम पारब्रह्म पदपूरा, सतगुरु सही लखाया। सोलै कला समझ कर भाषी, संत सुघड़ नर गाया ॥ १९ ॥ चार सांगमें चेतन सामल, गिरे आश्रम त्यागी। परमहंस लग ब्रह्म एक सारा, लखे सो है वड़भागी ॥ २० ॥ सोलै कला कही

निरणै कर, सो गुरुमुख जिन जाणी, हठ जोग सांख्य वेदांत समझ कर, कही निरवाणी वाणी ॥ २१ ॥ जीयाराम मिल्या गुरु पूरा, पारब्रह्म परसाया । वनानाथ जुगतीकर जाण्या, अवर धरूं नहीं काया ॥ ॥ २२ ॥ १६३ ॥ ७४५ ॥

साधो भाई नित आतम निरदाया । ज्ञान विना जीव मायामें भासै, मिटैं ज्ञानतैं माया ॥ टेर ॥ इच्छा आदी ईश्वरी माया, तातैंतिरगुण थाया। रजगुण उतपति थिति सतगुणतैं, लीन तमोगुण माया ॥ १ ॥ उतपति थिति लय भेदतिहूंमैं, जीव अनंत देखाया। आप अजीव अनादि केवल, सभर भरया निरदाया ॥२॥ माया भस्त अनादि कलपत, सत आतम सुखदाया । रविम लेश निशा नहीं पावैं, यूं चेतन ब्रह्मराया ॥ ३॥ अनुभो ज्ञान कहा आतमका, लख्या सो निरभै थाया । कहे वनानाथ सुणो भाई साधो, कर निरगै दरसाया ॥ ४ ॥ १६४ ॥ ७४९ ॥

## राग परभाती ।

मैं रैता परमातमा, ज्यांकी कहूं रे निसाणी । मेरा स्वरूप अनादिका, तूं क्या लखत अजाणी ॥ टेर ॥ मेरी सत्ता निज आतमा, तातें चउंखाणी । मैं प्रेरक सब जीवका, मेरी कबुव न हाणी ॥ १ ॥ उपजै मिट

फेर होत है, त्रिविध ताप लगाणी। त्यूं तें जाण चोथी जुदी, जाका है हम जाणी ॥ २॥ आदि अंत मध्यकूं लखे, साखी जाण कहाणी। मन आतम परले गया, आ साख़ा परवाणी ॥३॥ हम परलाके वार हैं, जाणी जाण रेहाणी। असंख जुगांके आगली, केई ये सिध पुराणी ॥ ४ ॥ सत्र सलूणा श्याम है, नूरी नित निरवाणी। वनानाथ शुध बोध है, बोधक सही परवाणी ॥ ५ ॥ १६५ ॥ ७५४ ॥

ये निश्चा निरवाण है,निरवाणी वाणी। निरवाणी निर्वाणहै निरवाणी जाणी ॥टेर॥ शुद्ध स्वरूप परमातमा, सो है सदा विज्ञाना। जाग्रत सुपन सुखोपती,तुरीया दै म्यांना ॥ १ ॥ जाग्रत झत्रका जगतका, सो है आदि पसारा। सत्र इन्द्रयां का भोगता, विसवै जीव विचारा ॥२॥ नव तत्त्वनका सुपनहै, सोई मध्य कहाई। संकलप विकलप भोगता, तेजस जीव रैहाई ॥ ३ ॥ सुन सुखोपति अंतमैं, जाग्रत सुपन विलाना । सो भोगी सामानका, प्राज्ञ जीव वखाना ॥ ४ ॥ साखी अवस्था तीनका,तुरीये तदरूपा । आदि अंत मध्यतें परे, सोहै अमल अनूपा ॥२॥ तुरीये तुरीये अतीत है, रवि कला ज्यूं एका। भेद अवस्था तां नहीं,जां दूजा नहीं लेखा ॥ ६ ॥ मम महरम अद्वेत है, नहीं निकट

नहीं दूरा। वनानाथ अदभुत गती, लखसी संत सूरा ॥ ७ ॥ १६६ ॥ ७६१ ॥

साधो भाई नित निरगुण निरभोई। अपणी जाण आप ही जांणें, विधि निषेध न दोई॥ टेर ॥ गुण निरगुणकी कहूं हकीकत,सुणो संत जन सारा। निरगुण निरालेप निराकारा, है तिरगुण आकारा॥१॥ निरगुण ब्रह्म चेतावे तिरगुण, योई है तिरिविध भेदा। मल विछेप दोप आवरणकी, जुई जुई दे वेदा॥२॥विसवे जीव स्थूल देह जाग्रत, पनरे तत्त्वका मापा। इद्रियां विषे भोग भुगतावैं, वंधा दोख मल आपा॥३॥ तैजस जीव देह पुनि सूक्षम, नव तत्त्वनकी थाई। संकलप विकलप भोग सुपनमें, दोख विछेपता पाई॥ ४ ॥ प्राज्ञ जीव देह है कारण, सुखोपति मांहे भूला। भोग सैमान दोख पुनि आवरण, सो सब लेखा ऊला॥ ५ ॥निरगुण ब्रह्म अभेद अनादि, निजानंद निजरूपा। तिरगुण असत सत सचिदानंद, अपणा आप अनूपा॥ ६ ॥ ये निरगुण तिरगुणका निश्चा, अगम निगम कहे ताही। वनानाथ निरगुण निरवंधण, तां तिरगुण नहीं काही ॥ ७॥ १६७ ॥ ७६८ ॥

या सतगरुजी री सोजीरे,साधो अगम निगम कहे दोजी। सतवादी सिप लहे पारखा,'सकल भरम दे खोजी

॥ टेर ॥ माया ब्रह्म भया दोऊ मिश्रित, रची तिरगुण ता बाजी। ता संजोग जीव होय भरम्या, अपणारूप भूलाजी ॥ १ ॥ सकल सृष्टिका सतगुरु मालिक, ज्यां के पूंजी सोजी। सत असत का करत निवेड़ा, माया ब्रह्मका खोजी ॥२॥ गुरुका शवद सुण्या शिष्य सरवण, तात मन लागा जी। वहुत जुगनका जीव अचेतन, गुरुगम सुण जाग्या जी ॥३॥ सारासार विचार्‍या गुरुमुख, सतगुण वोध गया जी। माया अंश तज्या रज तम गुण, निश्चै ब्रह्म लख्या जी ॥ ४ ॥ व्यापक ब्रह्म अचर चर मांई, सदा निरंतर रहे जी। माया भेद नहीं ता भीतर, सोई सनातन मांजी ॥ ५ ॥ सत की सैन कही हम सबकूं, जाणो पंडित काजी। वनानाथ गुरुमुख जिन पूगा, वेमुख डूबा पाजी ॥ ६ ॥ १६८॥ ७७४ ॥

इच्छा तीन वताई रे साधो, येई जाण रहा जाणी। अपणी ठोड ठोड कई इच्छा, आप रहत निरवाणी ॥ टेर ॥ इच्छा अरु परमारथ इच्छा अनइच्छा तिहूं ठानी। इन तीनांकी जाण जुई जुई, कर निरण कहूं वाणी ॥ १ ॥ इच्छा अरथ विचारे, आदि वेहद ब्रह्म स्वरूपा। कर अहंकार पुरुषकी प्रकृती, धर्‍या अंनतां रूपा ॥ २ ॥ परमारथ इच्छा है पूरी, ज्यां स्वारथकी

ह्याणी। एको ब्रह्म नासती दुतीये, इच्छा परमारथ जाणी ॥ ३ ॥ अनइच्छा आतम नित चेतन, ज्यां नहीं व्याप अव्यापा। आदि अनादि सनातन सोहं, जाणें अनइच्छया मापा॥४॥अपणा आप अमर अविनासी,निजानंद निज साईं। ज्यां इच्छा वे इच्छा नांहीं, सखा अतीत गुसांईं ॥५॥ इच्छा तीन भेद गुण भाखे, रती फरक नईं कोई। भेदा भेद रहित आतमा,वनानाथ है सोई ॥ ६ ॥ १६९ ॥ ७८० ॥

सो साधू निज जगतमें, गंगोदक पाणी।जो जावे ज्यां का मल हरे, ताकूं वेद वखाणी॥टेर॥नाम लेत विसवासका, अवास एक नहीं पालें। धके पडे सोई आचरें, नीची दृष्टि निहालें ॥ १ ॥ बड़ा वचन कहे जगतमें, अपणी मति छोटी। श्वान भोग किम करसकें, हथणी भई मोटी ॥२॥ हथणीका महातम बडा, ताकें गज जोड़े। गति मति वाकी एक है, नीची बुद्धि न मोड़े ॥ ३ ॥ ऊंचा पद वंछे सवै, जो गुरु गम वतावें। तब पावे ऊँची गती, सो निज संत कहावें॥४॥ मान बड़ाई सव तजें, सो संत रहें निसकामी। वनानाथ उण संतकूं, कीजे कोटि सलामी ॥५॥ १७० ॥ ७८५ ॥

सुरत सुण वावरी तेरो, वीतो जाय वेवार। सुरत सुण वावरी तेरो, वीतो जाय वेवार ॥टेर॥ ओ संसार

ओसको पाणी, याकी तजो सब आस । घाम पड़े जब सूके सबेरे, ओ जग निमक निवास ॥ १ ॥ केई वार जीवा जूंण भोगी, अब नरतन पायो रे गिवार । होय सनमुख सायबसूं अभागी, तनैं सतगुरु कहत पुकार ॥२॥गुरु संतनको संग सत जाणो, तजो जग असत असार । सिंध देवैं साची सतगुरुजी पलमें करें भव-पार ॥ ३ ॥ सास उस्वास समर शारंगधर, ये दें गुरु निजसार । वास बसै ब्रह्ममंडमें तेरा, ज्या भय नहीं लिगार ॥४॥ सतगुरु मिल्या टल्या भवसिंधुसूं, गाया गुण गोपाल । प्रेरक सब पृथवीको पालक, वनानाथ रैंया न्याल ॥ ५ ॥ १७१ ॥ ७९० ॥

पीयाजीके दरसणकी, लगरई अजब उमेद ॥ टेर॥ पीया पीया कर सवी पुकारें, कर सवागी ह्वाल ।प्यारी नाम उनीका कइये, लगी कलेजै भाल ॥ १ ॥ ब्रहन जारी सबसूं न्यारी, किया जोगणियां भेस । अवघट घाट वाट विन वेणा, चली पीयाजीके देस ॥२॥ हम-कूं मोही पीया निरमोही, बडो कठण दिलदार। वेदर-दीकूं दया न आवे, कबहुं न बूझी मेरी सार ॥ ३ ॥ पिया दरश विन चैन न आवे, होयरई ह्वाल वेह्वाल। दरश दिखाय दया करी मोकूं, ब्रहनीके रिछपाल ॥४॥ पिया वदन पर जाऊं बलिहारी, मुख देखत दुख जाय

कृपा करी किरपाल कंठ बिच, विरहनि लीवी लगाय ॥ ५ ॥ अब मेरे चितमें चेन भया, मैं होरही लाल गुलाल। बनानाथ ये भाव बिरहको, मिथ्या जगतका ख्याल ॥ ६ ॥ १७२ ॥ ७९६ ॥

साधो रे चित चेतन करीया, विन पारख पावो नहीं, निश्चै रहसो अलीया ॥ टेर ॥ तीन देह उतपति करी, आप गुण होये मिलिया, घट घट माया मन बंध्यो, भवसागर कलिया ॥ १ ॥ बेहद वृक्ष अनूप हैं, छाया हद नीचा । प्रतिबिंबतें फल ना मिलें, फल तो रहगया ऊंचा ॥ २ ॥ सरवां ज्यूं घट जांणियें, चैतन ज्यूं चंदा । भांडा फूटा भरमका, दूजा मिटगया फंदा ॥३॥ द्रिस मीटी जब दरसिया, पूरण पदपाया । बना-नाथ गम गुह्य हैं, निश्चै दरसाया ॥ ४ ॥ १७३ ॥ ८००॥

इति श्रीबनानाथजी महाराजरी वाणी संपूर्ण ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

# श्रीवनानाथजी महाराजका पर- वांणा प्रारंभ ।
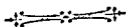
## चौपाई ।

ब्रह्म गुरु संतनकी दया, आतम ज्ञान उदय निज भया। परवाणा प्रगट कहे दाखूं, भिन्न २ कर निश्चा भाखूं ॥१॥नमो नमो गुरुदेव मनाऊं, दे परकमा सीस नवाऊं। ऐसी दया करो गुरु मेरा, काया गढका करो निवेड़ा॥२॥प्रथम पांच पचीसो जाणूं, तीन गुण तुरत पिछाणूं। रजगुण तमोगुण सतगुण माया।ज्यामें भँवरा भरम भुलाया ॥ ३ ॥ भटकत भँवर फिरे बहु फेरा, भांतभांत कर माया घेरा। एक पलक भर ठहर न पावे, काया गढ़में किमकर जावे॥४॥कायागढ करड़ो है भाई, जाकी संत करे ओलखाई। कहे वनानाथ माया सब त्यागी, गुरुसरणे आयो वड़भागी ॥ ५ ॥ सतगुरु सुणो विनती हमारी, तुम समरथ मैं सरण तुम्हारी। कायागढ़का भेद बतावो,संशय शोक भ्रम कूं ढावो॥६॥ सतगुरु दीनदयालू ऐसा, भेक विवेक दियाहै जैसा।

जाकी विगत कहूं समझाई, यामें रती फरक नहीं काई॥७॥ स्वास उस्वास सिमरणा सारी, दृढ आसण कर ममता मारी । भेद विभूत विचार चढाई, अनुभव वात अगमकी पाई ॥८॥ उनमुन मुद्रा सरवण सारी, ऐसे जोगी जरणा जारी । भैर मेखला तत्तकी टोपी, दया करी गुरु सिरपर ओपी ॥ ९ ॥ सिंगी सबद श्रुतकी सेली, गुरुप्रताप सिरपर मेली । करणी कुतक सबरकी झोली, शम दम साधन लिया विरोली ॥ १० ॥ सोहं भेद दिया गुरु भारी, भेख लिया मैं ब्रह्म विचारी । चित चाकड़ी चेतन वैणा, कायानगरमें फेरी दैना ॥११॥ सबद गुरूका सेल संभाया, होय सूरा रण भीतर आया । मनकूं पकड़ घेर घर लाया, वनानाथ ये जोग जगाया ॥ १२ ॥ कठण जोग है पंथ करारा, वहणा महा खड़गकी धारा । सब दल छेद हटे कबु नांहीं, सूर वीर छाजे दलमांहीं ॥ १३ ॥ प्रथम जाय नाभ कू हेरी, सतगुरु सबद लगाई फेरी। जासूं फुरे काम-ना सारी, अती अपरबल नागन नारी॥ १४ ॥ नाभी नगर नागणी जागी, जाकूं देख सकल जग भागी । उस नागनने सब जग खाया, जां सतगुरु पूरा नहीं पाया॥१५॥उस नागणकूं मारे कोई, जाके धड़पर शीस न होई।नागण मार नगर सब हेरा,उलटा प्राण पश्चिमकूं

फेरा ॥१६॥ नाभी कमल चेतनकी चोकी,उठती लहर उपजती रोकी।ऐसे चल्या पश्चिमकी घाटी, गांठ एकीसुं मेर की फाटी ॥१७॥ वंकनाल भंवरा वहे आया, उलटा कमल अमी वरसाया । झिलमिल जोत जुगतसे जागी,चेतन चल्या शिखर घर पागी॥१८॥इला पिंगला सुखमण भेला,उलटा किया त्रिकुटी मेला।त्रिकुटी महल झिलकतझांई,द्वादस नेजा फुरकत वांई॥१९॥मनपवन मिल धीरज पाई,सहजे चल्या गिगन पर जाई । सुरत सवदके मिटगया शंका, ऐसे लिया गिगन घर वंका ॥२०॥अनहद नाद वहां नित वाजे, झूठ कहूं तो सतगुरु लाजे । विनो वादली वरखा होती, स्वति बूंद नित वरसे मोती ॥ २१ ॥ ऐसा खेल गिगन घर खेली,अधर बुंद अमृतकी झेली । अमृत पीवै सो वड़भागी, जाकी सुरत गिगनमें लागी ॥ २२ ॥ खरतर खेल रचा वहु भारी, विना पाव जां नाचत नारी । टूंटा ताल वजावण लागा, गूंगा करे मुदरींमें रागा ॥ २३ ॥ वहेरां सुन्या पांगला भागा, अंधा निरत निरखणे लागा। उलटा पंथ खोज नहीं दरसे,सो साधू घर ऐसा परसै ॥ २४ ॥ नटणी पांव वरतपर मेलै,लोक हसे मुख आप न वोलै । सवकी सुनी में कान न दिया, निश्चै हेर अमर घर लिया ॥ २५ ॥ ऐसी गती पिछाणे जोगी, सदा समान ब्रह्मरस भोगी।

वनानाथ निश्चै कही वाणी, सो गुरुमुख जन लेहिं पिछाणी ॥२६॥ जोग तणा महरम लख गाया, आगम निगम यूं कह दरसाया। या विध जोग जुगत कर जोवें, सो जोगेश्वर निर्भय होवें ॥ २७ ॥ अब सुण कहूं सुन्नकि साखा, सदा सामान् परमाण न जाका । अपरमाण अलोगत सोई, आद अंत जां मध्य नहिं कोई ॥२८॥ हंस जाय सुंन घर जोया, जैसे हीर हीरकूं पोया। रवि अरु बिंब सदा हैं भेला, ऐसे हुवा ब्रह्मसूं मेला ॥ २९ ॥ जीव ब्रह्म जां दूजा नाहीं, सहजे मिला सिमरथके सांई । सिमरथ सांई हैं सब मांहीं, रहता पुरुष दीसता नाहीं ॥ ३० ॥ जड चेतनमें है एक सारा, भरया ब्रह्म नहीं कछु न्यारा । पुष्प वासना दीसत नाहीं, ऐसे ब्रह्म भरया सब मांहीं ॥ ३१ ॥ मैं नहीं जां मैं चल आया, ऐसा खेल अधरमें पाया। नहीं जहां पिंड पवन भी नाहीं, सकल खेल दीसत मो माहीं ॥३२॥ सो दीसे सो कहिये माया, आप अरूप अथाग रहवाया। काया करम नहीं जां कर्ता, भोक्ता भोग्य नहीं जां भर्ता ॥ ३२ ॥ भेदी जके भरमगढ़ जीता, अनुभव वात अगमकी कहता । महरम विना कथो सब कोई, आप मुंवां विना मुगत न होई ॥ ३४ ॥ जीवत मुंवां मुगतमें माले, जाका वचन जुगोजुग चाले। वना-

... र्गा,आसोजी कोई संत पिछाणी ... निश्चा योई, यामें रती फरक ... अरु पुरुप प्रकृती, लहै मुमुक्षू ...॥३६॥अब आतमका भाव वताऊं,तुरीय ... दरसाऊं। जाकी जाण अपार अलागी, निज अनुभव उर्की उर जागी ॥ ३७ ॥ आतम अज ... अनंता, वाको आद मध्य नहिं अंता। सदा सनातन शुद्ध स्वरूपा, अनावर्त अलेप अनूपा ॥ ॥ ३८ ॥ परब्रह्म है परम प्रकाशी, जाकी सता सत्त अविनाशी। सत्ततें फुरी फोरना माया, तिण सत रज ... गुन उपजाया॥ ३९ ॥ ब्रह्मा रजगुण किया पसारा, विष्णु सतोगुण पोखणहारा। शिव तमोगुन किया ...; ये तिहुंगुणका भाव विचारा ॥ ४० ॥ माया- ... आदि नहीं कोई, अपरमाण कहीजे सोई। ब्रहमंड ... ज्ञान है नाना, क्रिया न्यून विशेख समाना ॥ ४१ ॥ माया सब चेतन आधारा, आतम साक्षी ...नहारा। जो जो भाव वंधे जां संगी, आतम निरा... अनअंगी ॥४२॥ उतपति स्थिती लय माया मांहीं ... थिति लय नाहीं। सदा एकरस निश्च... वुद्धिमें कबहुं न आया ॥ ४३॥ आतम... जूं भाणूमें रात विलाणी। नित आत... जहां मायाका लेश न कोई ॥ ४४

पुरुष अरु पुरुषोत्तम एका, लय विक्षेप नहिं देख अदेखा। निरातंक निरवाण अथाई, आपोई आप और नहीं काई ॥ ४५ ॥ कहा अनातम परमातम तुरीये, तुरीये अतीत प्रीय निश प्रीये । निरातंक कहा सत असतता, वनानाथ हमतें सब सिधता ॥ ४६ ॥ ये निश्चा भाख्या निज ज्ञानी, वेदांत सिद्धांत वखानी। आदि अंत मध प्रापत सोजी, निश्चै जाण योई निरभोजी ॥ ४७ ॥ प्रथम गुरू उपासना गाई, दुतीये जोग रीत दर्शाई। तृतीये जोग अंत निरधारा, चतुरथ आतमज्ञान विचारा ॥ ४८ ॥

## छंद सोरठा ।

यह चारोंकी जाण,ज्यूंहीं भाण ब्रहमंडमें। कही परतकई परमाण, सब ग्रन्थनको योहि मतो ॥ ४९ ॥

## छप्पे छंद।

गीतामें श्रीकृष्ण कही अर्जुनकूं शिख्या, राज परीक्षित जोय ज्ञान शुकदेवसुँ लख्या । जनकराय मतिधीर मिल्या गुरु अष्टावक्रा, यदूरायकूं जुक्ति दिवी दत्तात्रय फक्रा।जीयाराम गुरु सत्त हैं, दिया सत्त उपदेश, वनानाथ परवाणा भाख्या, रती न राखी रेश ॥ ५० ॥

## दोहा छंद।

साध सती अरु सूरमा, जो जन लेसी जाण। अभिमानी उण जीवका, कबहूं न होय कल्याण ॥ ८१ ॥ परवाणा परतीत ले, समझे सुरत लगाय। वनानाथ वे प्राणियां, सहज मुकत है जाय ॥ ८२ ॥

## कुंडलिया छंद।

सम्मत उगणीसे अठारवें, सतगुरु पड़ी पिछान। तिथ तेरस थिरवारमें, मुख भाख्या परवाण। मुख भाख्या परवाण, ज्ञान रवि जूं ही दरस्या। भरम निशा भई नाश, सत्त आतम पद परस्या। सत सतगुरु सब शिष्य है, एही गुरु शिष्य की मत। वनानाथ निश्चै भई, उगणीस्सै सम्मत ॥ ५२ ॥

इति श्रीवनानाथजी महाराजका परवाणा समाप्त।

---

ॐ

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

# श्रीनवलनाथजीमहाराजरी वाणी प्रारंभ।

## राग सोरठ।

फकीरी दिल बिच देव दीवाण, सबका संगी लिपे न किसमें, उनमुन आतम जाण ॥ टेर ॥ आसन पास उदास जगतसें, छाजत चौथे पद निरवाण । रवि जिम राजत भाजत अघ तम, सो जोगी जुगत सुजाण ॥ १ ॥ साखी सरब जगतसें न्यारा, सबकूं करत प्रमाण। चित मन बुधि प्राणका प्रेरक, इनकी करत पिछाण ॥ २ ॥ दृश्य प्रकासें उनहि देखकर, अलख अखंडत भाण । अपणी भूल दुजा होय दरसें, आपेई उलट समाण ॥ ३ ॥ नवलनाथ निज अदल फकीरी, दिल बिचमें दरसांण । बनानाथ सतगुरु जब परसे, तो पलमें किया कल्याण ॥ ४ ॥ १ ॥

फकीरी कोई जन करत करूर। ब्रह्म अगनी प्रजाल प्रगटे,प्रतक आप हजूर॥टेर॥ध्यान धमण संजम सिल

गाइ,कर छार वासना सूर। पांच विषय गुण तीन प्रकृति, भये अव डरमांसे दूर॥१॥ सीपमांय ज्यूं रूपा विलांणा, यूं कींवी चिदमेंउपाधि चूर।निरावरण आतम परकास्या, नित निकलंक एक नूर ॥ २ ॥ मन पवना वाणी नहीं पहुँचे, बावन अंछर न बंधे रूप । त्रिविध ताप लिपे नहीं ताके, ऐसा है अगम अनूप ॥ ३ ॥ ज्ञान फकीरी जाणत कोई गुरुमुख, और भरम भये भकभूर । नवलनाथ निरणे कर निरखा, गुरु वनानाथ भरपूर॥४॥२॥

फकीरी यह रमज निरंतर जाण। वेद कतेब वाणी नहीं खाणी, रहता आप अवाण॥ टेर ॥ चले न अचल गिरे नहीं त्यागे, लीना पद निरवाण। फुरे न अफुर करे न अकरता, अलख उन्मुनी पिछाण ॥ १ ॥ सत नहीं असत दिवस नहीं रजनी, अनुभव एकरस भाण। भरम न करम अहं केई पारा, बुधकी थकत पिछाण ॥ २ ॥ दोय न एक ज्ञेय नहीं ज्ञाता, ध्येय ध्याताकी हाण । परा न अपर दृश्य नहीं द्रष्टी, आपेई आप समाण ॥ ३ ॥ जीव ब्रह्मकी कहुँ न कलपना,कलपनहार विलाण । नवलनाथ निरंजन मिलिया, मन कीया उलट पियाण ॥ ४ ॥ ३ ॥

फकीरी या करे कोई सेर, मन कर मेर कर मणियाँ, सुरत समझकर फेर ॥ टेर ॥

इड़ा पिंगला सम कर दोनूं, ज्ञान ध्यान धर हेर। श्वासा सुखमण कुंभक सगति, कर सुंन सिखरकी सेर ॥ १ ॥ मन मिल पवन शवद मिल सुरति, उलटत मूल सुमेर। सुखमण मारग मीन पपीलगत, खग ज्यूं सुरती पेर ॥ २ ॥ सुरति न नूरति रूप न मूरति, लीन भये सुनकी ढेर। सुनकेई पारा वो आतम न्यारा, अलख अजूणी अजेर ॥ ३ ॥ वनानाथ गुरु किरपा कर दी, ध्यान कला समसेर। नवलनाथ परमपद पस्या, काट वंधन मन केर ॥ ४ ॥ ४ ॥

फकीरी त्याग वैराग दोय धार। सरधा कर विच धार दुधारो, दुतीयाके सिर मार ॥ टेर ॥ त्याग खड़ग अरिदल परसत, जव दरसत दीदार। भागत भरम ज्यूं त्यागत संसै, यहे भसमीभूत संसार ॥ १ ॥ अगनीसें धातु पाणीसें कपड़ा, सव मल तजत विकार। संकलप विकलप तजत वासना, त्यूं निकसत आतम सार ॥ २ ॥ हंसा जिम खीर नीरविन गिरसत, दधि मथ विरत निकार। जीव विवेकी पीवके प्यासें, कर ध्यान धमण एकतार ॥ ३ ॥ चक्रवरती पूरा रण जीतत कोइ सूरा, अभय त्रिभुवन करार ॥ नवलनाथ निरंजण मिलिया, वनानाथ गुरु धार ॥ ४॥ ५ ॥

## राग परभाती ।

दुःखातीत पुरुषकी महिमा, सुण मेरा भाई । स्थित होय शुध स्वरूपमें, गुणां रहित समाई ॥ टेर ॥ ना कुछ त्याग न संगरे, निगमा भोम वसाई । हद बेहदके ऊपरे, सुरता जाय विलाई ॥ १ ॥ चित्त समीरके संग विना, दुतिया लहर मिटाई । अदृष्ट भई निज आतमा, दुःख न व्यापै काई ॥ २ ॥ शीत उसन कोउ ना लगे, जन्म मरण न पाई । हरष सोक कित संभवे, आपो आप भुलाई ॥ ३ ॥ महिमा करी उत्तम त्यागकी, में द्वंद्वातीत लखाई । वनानाथ गुरु भेटिया, नवलनाथ गम गाई ॥ ४ ॥ ६ ॥

उत्तमनाथ तुम उर धरो, उत्ताम सीख सदाई । त्याग ग्रहणके फंदमें; कहुं सुख न पाई ॥ टेर ॥ भेद दृष्टिके लीन भयां, दिरस तुझ रूप समाई । जलहि तरंग तरंग मिलि जलहि, भेद भरम विलाई ॥ १ ॥ त्याग ग्रहणकी समरती, होय दृष्टी दिरस उपाई । भूल अविद्या जालकूं, जद किरतारथ थाई ॥ २ ॥ एक छोड़ एक झालणा, उभय आग लगाई । संकलप विकलप विषय विन, गुणा अतीत रहाई ॥ ३ ॥ द्रितिया रहित यह पंथ है, वनानाथ समझाई । शुभाशुभसें मुक्त होय, नवलनाथ दरसाई ॥ ४ ॥ ७ ॥

## राग एली।

पीया तुज परसणकी मुज खटक हृदे बिच खेद ॥ टेर ॥ पीयासे प्रीत पुराणी जागी, विरह करी मोय वेहाल। तोर दरस विन चैन न आवे, भया कलेजे साल ॥ १ ॥ सजनपर वारी मिलूं भरतारी, चलि दरद दिवानीं देश। निजर निहारूँ हाथ नहीं आवे, रूप विहूणो नरेस ॥ २ ॥ तुम विन रूप रूप मोय वांधी, तोय दया नहीं दिलदार। तलफ तलफ जीव जाय हमारो, पलपल करत पुकार ॥ ३ ॥ तज निज रूप अरूप होय चाली, जब पायो प्राण आधार। वनानाथ सतगुरु भल दरसे, किया नवलनाथ निसतार ॥ ४ ॥ ८ ॥

पीयाजी मेरो वसे, परसें पार परेस ॥ टेर ॥ अगमपुरीके वीच विराजे, अजब अनोखो देश। निगम मिसाल देह विन दरसे, परसे सुरत हमेस ॥ १ ॥ पीवका नूर सूर दसुं दिसमें, भलके पुरंदर वेस। वादल के संग वीज मिलाणी, ज्यूं नारि मिली अमरेस ॥ २ ॥ नारि अरु पुरुष एक भये दोनूं, भेद न रया लेस। आनंदके अनुभव विलूंवी, मिटगये सकल कलेस ॥ ३ ॥दूजी वृत्ति सवे विसराणी, भागा भरम सनेस। नवलनाथ सुरता सुलझाणी, गुरु वनानाथ उपदेस ॥ ४ ॥ ९ ॥

पीयाजीकी सुरतसूं, तुम हम एकेई रूप ॥ टेर ॥ पीयाजी हो जिण दिन तुमसें वीछड़ी, में तो फिरी अनंतां देस। सुरत न देखी सांम की, भुगते केवल कलेस ॥ १ ॥ चित चितामें जल रही, पायो नहीं भरतार। जो परणी सोई मरगया, रही व्यभिचारण नार ॥ २ ॥ घर करुं में गिरपड़े, मिलें वो वीछड-जाय। खिणक सुखकि कारणे, करि वादलकी छाय ॥३॥ उण दिल ऐसी ऊप जी, अमर वरुं भरतार। पीया मरें नहीं में मरूं, जलणो पड़े न लार ॥ ४ ॥ फुरि जद पीवसे वीछड़ी, अफुर भई तव एक। नवलनाथ सुरता सुवागणी, गुरू वनानाथ विवेक ॥ ५ ॥ १० ॥

वंगला दवादसांपर देख, जामें निरगुण आप अलेख ॥ टेर ॥ शम दम साध सरोदे लावो, करलो परम विवेक। सुंन घर सुरति सहज मिलावो, तो परसो पूरण एक ॥ १ ॥ उदे अस्त विच प्राणकी संधि, छिनभर सुखमण देख। आवागिवण करे न आतम, अविचल जोति सेप ॥ २ ॥ पवन पार दीदार वो वंगला, अघर अजुणी सुवेक। सुरति निरत मिले सम पहुँचै, वंगला निरगुण नेक ॥ ३ ॥ वनानाथ सतगुरुकी किरपा, वंगलो पायो अजव अलेख। नवलनाथ ता वीच समाणा; आदि पुरुष अभेख ॥ ४ ॥ ११ ॥

नाम रूप दोई विणसत दीसे,कुण उतरैं भवपारी
मूरख कैसी मुकति विचारी,जाको अर्थ कहो नर नारि
॥ टेर ॥ देखण सुणन कहण सब माया, मिथ्या मिरग
जलधारी। सो पद जो माया विन कहिये, ज्यां नहि
गम तुम्हारी ॥ १ ॥ करे भेखसे टेक ओ विनगम
मनमैं मोह अपारी । सूरज देख आगियो उमंगे, देखे
जोति हमारी ॥२॥ परचा पूछत फिरे अवरोंकूं,अपनी
गति विसारी । चावत चिणा मांगे कस्तूरी, अदभुत
भिख्यारी॥३॥परचाही माया अपरचाही माया,निरगु
लख करतारी। चवदे लोक सिद्धाई तेरी, तृणसमा
तजारी ॥४॥छोटी माया छोड़ सिद्धाई, मोटी माय
बँधारी । साधू समझें काकश्रिष्ट सम, आतमरूप लख
री ॥ ५ ॥ साध सिद्धाई अंतरा ज्यूं, धरनसे गिग
अटारी। संत निरंतर मुक्ति समझें,सिद्ध माया उलझा
॥६ ॥ राज आदि अष्ट सिद्धि फेरी,ऋषभदेव तपधारि
निजरूप मायाके पारा, नवलनाथ सुखारी॥७॥१२

अवधू मैं हूं अमर अनादि सदा, जुग धरता आत
जोती नरेस । जोगी जाद आदि अविनासी, अविग
नूर परेस ॥टेर॥ हुता अचेत चेत सुध कीनी, पा
प्रकृति प्रवेस। किरियाजाल भाल भवसिंधू,मकड़ी त
बंधेस॥१॥ले वैराग राग दुख त्यागी, आपैं मांय ल

स । सतगुरु बूझ सूझ सुध लीनी,निज घर पायो निर-भेस ॥ २ ॥ तुरिय हजूर सूर सम दरसे, दूजा भरम न लेस । वनानाथ गुरु अगम अजूणी, नवलनाथ सोई सेस ॥ ३ ॥ १३ ॥

जिण शवदांमे ब्रह्म नहिं परचै, सो शवदही तजो प्रचारी । आतम जामें प्रतक पाइये,परचा कोण वडारी ॥टेर॥ब्रह्म प्रचै होय तो बोलो,नहीं तो चुप कर जारी। मायामयी परचा नहीं मानूं,मायाई असत असारी॥१॥ जो तूं उड़ता फिरे आकासां, जतन करी वहुभारी। पंखी आगे उड़त विन जतनां, तामें सिद्ध विचारी॥२॥ हम निरगुणके अवतारी,जिणने माया सृष्टि पसारी । आदि अंत एक ब्रह्म अखंडित,मूरख क्यूं माया उल-झारी॥३॥उतपति परचा परलय परचा, परचा थित-ये सारी । मेरा परचा इन परचोंसे न्यारा,उपजै विणसै न लिगारी॥४ ॥परचा मुकति एकधारी, जातें दुख मिटे संसारी । गुंजा गेह पारस मणि खोवे,ताकूं मूरख कहे जग सारी ॥ ५ ॥ वनानाथ गुरु केवल चेतन, परचे नवलनाथ मुरारी । एको ब्रह्म नास्ति द्रितीये, वेद सिद्धांत लखारी ॥ ६ ॥ १४ ॥

माया प्रकृति है हमारी, हम तो चेतनरूप ता पारी। शास्त्रदिष्ट विचारी साधू,मन विकलप तज भारी ॥टेर॥ माया मेरी सब जुग रचिया, हम ताका आधारी।

पांच पचीस तीन होय पसरी, हम चेतनहार द्रष्टा रं
॥ १ ॥ हमहीं जीव ईश सब कलपै, हमी ब्रह्म कल
पना धारी। प्रकृति पार पुरुष अविनासी, लखै जिनक
वलिहारी ॥२॥ परचा एक शवदका देखो, जामें दरस
है दीदारी। तुम तो गुरु शवद नहीं परचो, जासुं मि
न चौरासी थारी ॥ ३ ॥ हम तो गुरु ईश्वर एक क
मानूं, जासूं उपज्या ज्ञान भवपारी। ज्ञान दृष्टिमें दूज
नहीं दरसै, खंडि प्रकृति सारी ॥ ४ ॥ वनानाथ गु
अगम अजूणा, निरगुणके अवतारी। निगम अग
नेत्र कर निरख्या, नवलनाथ सोई वारी ॥५॥ १५

स्वसमवेद कोई विरला पावै, उलटा विरछा मू
समावै ॥ टेर ॥ आप अकलतै सकल पसार
धर अंवर रचिया आकारा। पसरा विरछ फूलिय
वागा । आपहि जल आप सींचण लागा ॥ १
आपहिं वीज विरछ अविनासी, आपहि जीव भं
जाति चौरासी। अंछर एक अनादी देवा, तिणव
वावन अंछर भेवा ॥ २ ॥ प्रथम सहजे सोहं उचार
सहस्र दल कीया कमल पसारा । मानसरोवर हं
कहाया, मेर डंड घर राह चलाया ॥ ३ ॥ तुरिये अती
रूप सोउ भूला, अंछर चार मिल मूल घर फूला
सहस्र विसरिया च्यार द्रिढाया, जन्म मरणके मार
थाया ॥ ४ ॥ मूल कमल तुरिय जीव सो थाया, सं

वंधाणा फेर वंक न पाया । सुधी राह तज वंकी लीनी, जिण कारण चौंगसी चीनी ॥ ५ ॥ संख भमर एक ग्रंथी लागी, बीज जागरत अवस्था जागी । वेद अथर्व परा भई वाणी, त्रिस जाल सत्ता लपटाणी ॥६॥ जाग्रत होय लिंग घर आया, खटदल अंछर कमल उपाया । काम कलीपर करत गुंजारा, त्रिरमादेव रजोगुण धारा ॥ ७ ॥ उलटा उग्थ नाभ घर आया, दस अंछर एक कमल रचाया । सगत भुजं पश्यंती जागी, सामवेद स्वासा धुन लागी ॥ ८ ॥ पीठ कुंडली सोवत ध्याना, नील वरण सँग विष्णु वखाना । माया सगति परवल धारी । सहस्र वहोत्तर नाड़ी पसारी ॥ ९ ॥ पवनरूप सूर अभंगा, प्रलय अवसथा सुखोपति, संगा । जाग पवनसें मन सँग धाया, हिदे द्वादश अंछर पाया ॥ १० ॥ मनमें देखि मध्यमा वाणी, यजुरवेदकी कला पिछाणी । मन कला चंद महेसुरराया, संकलप डोरि सुपन दरसाया ॥ ११ ॥ द्वादश कला सूरकी छाया, मनरूप होय चंदा थाया । कंठ कमल मन मधुकर आया, षोडश दल एक कमल उपाया ॥ १२ ॥ रिगवेद वैखरी वाणी, इंद्र्यां स्थूल सत्ता उलझाणी । अंछर सोलै उचरत संगा, देवी सरस्वती जाण अरधंगा ॥ १३ ॥ वैठ त्रगटी द्विदलथाना, महा जागरत अवसथा जाना । अंछर दोय

हंस घर माना, नैण दोय लख ज्ञान विज्ञाना ॥ १४ ॥ विक्षेप आवरण दरसे माया, चंदलोक वर रहत समाया। चरमदृष्टि देखत सथूला, लख चौरासी भुगती सूला ॥ १५ ॥ वाणी च्यार वेद सोई च्यारी, लखत भेद कोई ब्रह्म विचारी । बावन कमलदल अंछर एही, बुधिवंत सुसमवेद ईनें केही ॥ १६ ॥ तीन अवस्था माया पसारा, चतुरथ ब्रह्म सब जाणनहारा । तुरिये जाण जीवत मुकति सोई, जन्म मरण दुख भुगते न कोई ॥१७॥ तुरये अतीतमें वेद न वाणी, थकत भये सब वचनकी हाणी। आदि घर सो कह समझाया, जिण घर मारग हंसा आया ॥ १८ ॥ नवलनाथ अनुभव कही वाणी, उलट चले कोई पीछा प्राणी। वनानाथ सतगुरु परवाणी, अमरलोककी लाये निसाणी ॥ १९ ॥ १६ ॥

पूरण करिये सोई नारिहे, पुरे सो पुरुष कहाय। नारि पुरुष मिल जग रचा, कहूं भेद समझाय ॥ टेर ॥ पिरथी पिरथम नारि भई, जल जाको भरतार। उभे मेल अन्न ओखदी, सब रचना आधार ॥ १ ॥ अन्न रसमई एक पुरुष भया, रज वीरज नर अरु नार। दौनूं मिल रचना शरीरकी, अन्न रस पुरुष आधार ॥ २ ॥ पवनमई एक पुरुष है, अन्न रस पुरुषके पार। सरब रसोंकूं पूरता, पवन पुरुष भज सार ॥ ३ ॥ मनोमयी एक पुरुष है, रह्यो

वंधाणा फेर वंक न पाया । सुधी राह तज वंकी लीनी, जिण कारण चौरासी चीनी ॥ ५ ॥ संख भमर एक ग्रंथी लागी, बीज जागरत अवस्था जागी । वेद अथर्व परा भई वाणी, द्रिस जाल सत्ता लपटाणी ॥६॥ जाग्रत होय लिंग घर आया, खटदल अंछर कमल उपाया । काम कलीपर करत गुंजारा, बिरमादेव रजोगुण धारा ॥ ७ ॥ उलटा उरध नाभ घर आया, दस अंछर एक कमल रचाया । सगत भुज पश्यंती जागी, सामवेद स्वासा धुन लागी ॥ ८ ॥ पीठ कुंडली सोवत ध्याना, नील वरण सँग विष्णु वखाना । माया सगति परवल धारी । सहस्र बहोत्तर नाड़ी पसारी ॥ ९ ॥ पवनरूप सूर अभंगा, प्रलय अवसथा सुखोपति, संगा । जाग पवनसें मन सँग धाया, ह्रिदे द्वादश अंछर पाया ॥ १० ॥ मनमें देखि मध्यमा वाणी, यजुरवेदकी कला पिछाणी । मन कला चंद महेसुरराया, संकलप डोरि सुपन दरसाया ॥ ११ ॥ द्वादश कला सूरकी छाया, मनरूप होय चंदा थाया । कंठ कमल मन मधुकर आया, षोडश दल एक कमल उपाया ॥ १२ ॥ रिगवेद वेखरी वाणी, इंद्री सत्ता उलझाणी । अंछर सोले उचरत सं[illegible] सरस्वती जाण अरधंगा ॥ १३ ॥ वेठ [illegible] सथाना, महा जागरत अवसथा जा[illegible]

सूल तिरये धारी,जद जीव मान भरमाया॥ ३ ॥ सुपन मांय सुपनी सम स्वामी, कर दूजा दुख पाया। स्व स्वामीभाव सगत संबंधा,विधि अनेक वणाया॥ ४ ॥ सहज समाधि भूल जग रचिया, लगी समाधि समाया। नवलनाथ आपका आपा, गुरू वनानाथ देखाया॥ ५॥ १९॥

सुसमवेद सचियार सोजो,आतमा दिनरैण खोजो। विषयारस सिरसें त्याग वोजो, आपसे धुन लाय। अवधू आपो केवल थाय भाई॥ टेर॥ नाभमें निरवाण जोवो, सुरत सुखमण वीच पोवो। योगनिद्रा अभै सोवो,अरध ऊरध मिलाय। अवधू सहज अरस समाय भाई॥ १ ॥ विषम नाली वंक हेरो, उलट पवना पिच्छम फेरो। चूर अरिदल गिगन घेरो,सूर शशि घर लाय। अवधू दमोदम हर पाय भाई॥ २ ॥ कर चकर सुलटा प्राण पेरो,सोहं हंस एकसार टेरो। शिखर सीधा ठाय मेरो, सगत सिव घर जाय। अवधू वहुर जन्म न आय भाई॥ ३ ॥ प्राण तन मन सीस तेरो, चरण रहै नवलनाथ चेरो। नही बंधण करम केरो, वनानाथ गुरु ध्याय। अवधू दियो पूरण ब्रह्म दरसाय भाई॥४॥२०॥

इति श्रीनवलनाथजी महाराजरी वाणी समाप्त।

अनुभवप्रकाश समाप्त।

अथ

# श्रीनवलनाथाष्टकप्रारंभः ।

र्वज्ञत्वं ध्यानविचित्रं सुखकारं मायातीतं मायिविर-
नवेपम् । भावाभावैर्द्वैतविकारैर्गतवादं ह्युत्तमना-
ीगुरुमूर्त्तिं प्रणतोऽस्मि॥ १ ॥ज्ञातृज्ञेयज्ञानविचारे
ूपं ध्यातृध्येयध्यानविचारे कृतसारम् । प्रेमानन्दं
योर्धौ धुतदेहं ह्युत्तमनाथः श्रीगुरुमूर्त्तिं प्रणतोऽस्मि
॥ संसारार्णवनौकारूपं जनतानां सुष्ठु वचोभिर्ज-
स्तारं शोभाढ्यम् । तीर्थविराजं तीर्थीकारं मुनिवेषं
मनाथःश्रीगुरुमूर्त्तिं प्रणतोऽस्मि ॥३॥ श्वासोच्छ्वासे-
ाजापैःस्वरलीनं योगाभ्यासे योगिविमोहं योगी-
। नित्याकाशे प्रणवस्वरूपं पश्यन्तं ह्युत्तमना
श्रीगुरुमूर्त्तिं प्रणतोऽस्मि॥४॥योगैर्भोगैर्भोगविकारै
ीतं विश्वविभातं सज्जनसोमं योगाभम् । अचरच-
मुद्रावेशं नाथेशंह्युत्तमनाथःश्रीगुरुमूर्त्तिं प्रणतोऽस्मि
॥ नित्याभ्यासेऽखण्डविचारं प्रथयन्तं सद्भक्तेषु
त्मविवेकं कृतदेशम्।विज्ञवराणां ध्येयं गेयं हृदयस्थं
मनाथःश्रीगुरुमूर्त्तिंप्रणतोऽस्मि॥६॥ भूमी मण्डलभू-

पणरूपं निष्पापं जीवोद्धारे दिक्षु चरन्तं शुकरूपम् । परमानन्देमग्नस्वान्तं गतनीडं ह्युत्तमनाथः श्रीगुरुमूर्त्तिं प्रणतोऽस्मि॥७॥चित्रविचित्रं दुर्घटबोधंविख्यातं भवभीसिंधु दृष्ट्याशुष्कं कुर्वाणम् । वादविवादान्दूरं दूरं कथयन्तं ह्युत्तमनाथःश्रीगुरुमूर्तिं प्रणतोऽस्मि ॥ ८ ॥ ज्ञानं नित्यनिरंतरं जनमुदे संदर्शयन्स्वात्मनि सद्विद्यां रचयन्सुधारसवचोभिर्विज्ञयोगीश्वरैः । कारुण्येन कृपा रसेन जडता पंकं च संक्षालयंस्तत्सत्तत्त्वमसीतिवाक्यविभवं संलुण्ठयन्द्योतताम् ॥ ९ ॥ इदं नवलनाथानां स्वामिनामाष्टकं शुभम्॥यः पठत्प्रयतो नित्यं स भवेद्भवबन्धहा ॥ १० ॥ ॐ तत्सत् ॥

इति उत्तमनाथकृतं श्रीनवलनाथाष्टकं समाप्तम् ।

श्रीः।

# नवलनाथजी महाराजकी स्तुति प्रारम्भ।

## दोहा।

श्री श्री गणपति गुणद, आदिनाथ उर ध्याय॥
गुरु नवल जु नाथके, गुण कछु कहूं गणाय॥१॥

## सोरठा।

अतिमनकर आनंद, जियाराम गुण नित जपूं॥
पूरण परमानंद; वनानाथकूं विनय कर॥२॥

## कवित्त।

कैधों आज धराको सनाथ करनेके काज,
आदिनाथ शंभु निज सुरत सवारी है।
पातंजलि वली निज योगके प्रचार हेत,
मारवार मांहि सु प्रगट देह धारी है॥
पापकूं पछार नर नारके उद्धार अर्थ,
गीताको स्वरूप कैधों कृष्ण ये मुरारी है।
ऐसे नवलनाथके चरण वीच माथ नाय,
वारवार हाथ जोरि वीनती हमारी है॥३॥
शंभुको स्वरूप सब योगिनको भूप यह,
तेज है अनूप जैसो मत्स्य तपधारी है।
गोरक्ष प्रत्यक्ष मानों वैठो सभा बीच आय,

यंत्र मंत्र तंत्रनको महा अधिकारी है ॥
बड़े बड़े भूप सो प्रगट शंभु रूप लखि,
सह ना सकत तेज जैसो तिमिरारी है ।
ऐसे नवलनाथके चरण बीच माथ नाय,
बार बार हाथ जोरि वीनती हमारी है ॥४॥
वेदनको ब्रह्मा सम जानत है भेद भेद,
खेद हरि सुखी जिन कीने नरनारी हैं ।
न्यायबीच गौतम रु सांख्यमें कपिल सम,
व्यास सो प्रकाश वेद अर्थ बीच भारी है ॥
अर्थशास्त्र माहिं मानो जैमिनी विराजे आय,
योगमें पतंजलीसो पर उपकारी है ।
ऐसे नवलनाथके चरण बीच माथ नाय,
बारबार हाथ जोरि वीनती हमारी है ॥ ५ ॥

## दोहा ।

नादबिंदु ज्ञानी महा, कैधों यहै कणाद ॥
ऐसे नवलानाथकूं, रटत सकल मनुजाद ॥६॥
नमो नाथ नवपदकमल, बनानाथ सिर नाय ॥
नवलनाथ अति नवल कर, नित प्रति करहु सहाय ७॥
नवहु नाथके तेजयुत, नवलनाथ अति नूर ॥
करै गोवर्द्धन वीनती, सिद्धनके कुल सूर ॥ ८ ॥

इति पं. गोवर्द्धनशर्म्माकृत श्रीनवलनाथजी
महाराजकी स्तुति समाप्त ।

॥ मङ्गलाचरणम् ॥

## ॥ श्रीनाथपंचकम् ॥

अस्ति भाति प्रियत्वेन सर्वत्र संस्थितात्मने ॥
मायाभेद निरस्ताय श्रीमन्नाथाय ते नमः ॥ १ ॥
निष्कलाय निरीहाय शान्ताय परमात्मने ।
सर्वेषामादिभूताय श्रीमन्नाथाय ते नमः ॥ २ ॥
नेतिनेतीति वाक्येन वेदा यं प्रवदन्ति वै ।
अनिर्वाच्यस्वरूपाय श्रीमन्नाथाय ते नमः ॥ ३ ॥
सर्वेन्द्रियगुणैर्नित्यमप्रत्यक्षस्वरूपिणे ।
स्वानुभूत्येकगम्याय श्रीमन्नाथाय ते नमः ॥ ४ ॥
रज्जौ भुजंगवद्यस्मिन्नधिष्ठाने चिदात्मनि ।
विवर्तते जगत्सर्वं श्रीमन्नाथाय ते नमः ॥ ५ ॥
भवतापापहं पुण्यं शोभनं नाथपंचकम् ।
तेन नः प्रीयतां देवो व्यापको नाथसंज्ञकः ॥ ६ ॥

---

ॐ

श्री परमात्मने नमः ।

# योगेश्वर श्रीउत्तमनाथजी महाराज-कृत वाणी ।

साधो अब प्रकट्यो पूरण भाग, गुरुचरणोंमे गयो चितलाग। सतगुरु निज विड़द संभाल, मेरा सब हर-लिया जंजाल ॥टेर॥ गुरुदेव मेरा प्राण आधारा, जिन दिया शब्द ततसार। राग द्वेष मदलोभऽहंकारा, भागा सबही विषयविकार ॥ १ ॥ भवजल अनन्त ही जानके, डर कर मैं करी है पुकार। सतगुरु सहाय करके मोकूं, तुरत किया है भवपार ॥ २ ॥ अनन्त प्रकाश कृपालु कहिये, है गुरु दातारों ही दातार। सदवन सूर उरमें ऊगो, दीवी सकल वासनाको जार ॥ ३ ॥ परमानन्द दिलहीमें पायो, देख्या है गुरुदेवका दीदार। नानाविधकी कलह कलपना, मिटी बहुत जनम की हार ॥ ४ ॥ नवलनाथ गुरु पूरण पूरा, समज्या सही ब्रह्म-विचार। उत्तमनाथ ता मांय समाया, रया नहीं है भेद लिगार ॥ ५ ॥ १ ॥

## राग।

भव तिरणेको अवसर आयो ए, बहुत जनमके पूरव पुण्यसे मानुपतन पायो ए ॥ टेर ॥

ईश्वरकिरपा सन्त समागम, गुरु चरणोमें आयो ए॥
प्रेमके पुष्प ध्यानको धूप दे, चितचंदन चढ़ायो ए ॥१॥
शील सन्तोष अमान अहिंसा, दम दया उर लायो ए।
काम क्रोध मद लोभ मोहको, खणखोज वहायो ए॥२॥
त्याग वैराग श्रद्धाको धारके, वक्र भाव हटायो ए ।
अनेक युगोंके मैल त्याग, ज्ञानगंगामें न्हायो ए ॥३॥
गुरुदेव पायो नहीं जबलों,बाहर धायो ए। सतगुरु शब्द
सुनायके ज्ञेय ज्ञाता बतायो ए ॥ ४ ॥ नवलनाथ गुरु
कृपाकरके, भ्रम मूल मिटायो ए । उत्तमनाथ स्वरूप
समझके,निज निश्चल थायो ए ॥ ५ ॥ २ ॥

अब मन ममता कुं मारो ए,सकलउपाधिकोमूल जा-
णके,अहंता टारो ए ॥ टेर ॥ सरव स्वरूप एक अखंडी,
न कोई भेद विकारो ए॥ जाते नाम रूप सब दीसे,कल-
पित संसारो ए॥ १ ॥ एकाग्रह मन बुद्धिकुं करके,
गुरु शब्द विचारो ए । शब्द विचार समज दिलमें,
निज रूप निहारो ए ॥ २ ॥ स नहीं इदं गुप्त नहीं
चौड़, नहीं अन्तर वारो ए। भोक्ता भोग्य प्रेरकता न
जामें, सो पद निश्चय धारो ए ॥ ३ ॥ नवलनाथ गुरु
दया करके , दियो शब्द इसारो ए ।उत्तमनाथ समझ
कर सही, हुओ भव पारो ए ॥ ४ ॥ ३ ॥

अब मन गोविन्द गुण गावो ए, ऐसी रमज समज
से ही जीवो परम पद पावो ए ॥ टेर ॥ लघु मृदु रिज

ही होयके, सत्संगमें ही नहावो ए। मान गुमान मद मत्सर सब दूर बहाओ ए॥ १ ॥ सुर दुरलभ ये नरतन पायके बिरथा न गमावो ए। स्वासो स्वास शिव सिमरके जग जीत ही जावो ए॥ २ ॥ थल जल अनल अनिल नभमें कर ब्रह्मही भावो ए॥ द्वैत भरम काम करम सब अविद्या कुं ढावो ए॥ ३ ॥ नवलनाथ गुरु शब्द सुणायो जामें लिव लाओ ए। उत्तमनाथ सोऽह समझके, भव भाव मिटावो ए॥ ४ ॥ ४ ॥

फकीरी फिकर देवै सब खोय, विषयानन्द अभिलाप त्यागके निजानन्द निश्चयही होय ॥ टेर। वेद पुराण दधि कुं मथके लियो है सार निचोय। किरिया करम असार समझके फेर नहीं बोझो ढोय ॥ १ । अनघ अलेप असंगी विचरे, सदा रहे निरमोय। शम दम श्रद्धा तितिक्षा करके, सुरत शब्दमें पोय ॥२। नाम रूप सब छोड़ उपाधी, भरम रखे नहीं कोय अचल अखंड अनन्तप्रकाशी, सत् चित आनंद जोय ३ निस वासर निरन्तर होयके, निजमें लगावे लोय उत्तमनाथ फकर है सोई, रहे सम दृष्टी में सोय॥४॥५।

फकीरी काम क्रोधकुं मार, पूजा लोभ रु गौरव गुमाना तन अभिमान बिडार ॥ टेर ॥ आस पतनि मम सुत त्यागो, चित बांधव बिसार। मोह मंदिर अरु करम खजाना, इनकुं देवो जार ॥१।

द्वैतबुद्धिकुं त्याग परेरी, नाम रु रूप विसार।
अपणा आप अरूप अनामी, नहिं कोई आर न पार॥२॥
चित चेत्य दृश्य अनातम, येही है झूठ विकार।
अचेत्य चेत आनन्दस्वरूपी, सत ही चेतक सार॥३॥
चेत अचेत कह्यो नहीं जावे, नहिं कोई दृश्य दीदार।
उत्तमनाथ अचल अखंडी, आपोई निश्चय धार॥४॥६॥

## हेली।

जग छीलरियेने छोडिए, सुख सागरमें नहाय॥टेर॥
दृश्य जालमें भरमके, अब नहीं खता ही खाय॥
सतगुरु दीनदयाल है, जिन दिया राह बताय॥ १॥
सकल शिरोमणि नाम है, सोहं शब्द दरसाय॥
शब्द पकड़के पूगिए, क्षर अक्षरकूं ही ढाय॥ २॥
असुर स्वभावोंको मेटिए, दैवी सम्पद उर लाय॥
विपयानन्दकुं ही त्यागिए, चिद्‌घन चेतन चाय॥३॥
तम रज सत्वके ऊपरे, भरियो है आनन्द अथाय॥
मगमें अरिदल जोर है, मार गोविन्द गुण गाय॥४॥
अक्षय अमर निज धाम है, तहां विरला हरिजन जाय॥
भरम मिटै सब वासना, पुनर धरे नहीं काय॥ ५॥
नवलनाथ गुरुदेवने, पूरण पद परसाय॥
उत्तमनाथ वहां पहुंचिया, फिर वह पीछा नहीं आय६॥७

## हेली।

जगकी कथा सब छोड़के,गुरुमहिमाकुं ही गाय॥टेर॥
नेज स्वरूपको ही जोइए, त्याग विषयकी चाय॥
आप उलटके आपमें, आपे आप समाय ॥ १ ॥
राग द्वेष मद लोभकूं, ज्ञान-अगनसूं जलाय।
भांग भवकी भरमना देखो आनन्द अथाय ॥ २ ॥
तोय दृष्टिमें नहीं तरंग है, यूं चिद्में नहीं करम न काय।
नाम रूप व्यभिचारमें, अनुगत एक ही दरसाय॥३॥
नवलनाथ गुरु पूरणरूप है सत चित आनन्द अमाय।
उत्तमनाथ ता बीचमें सदा रहो लिवलाय ॥ ४ ॥८॥

मनरे गोविन्दगुण क्यों नहीं गावे। मानुप जनम मिल्यो पुण्य पुंजसे अवसर गयो फेर नहीं आवे॥ टेर॥ विपयलम्पट दीन आतुरा है जाको जायके क्यूं तू दांत दिखावे। जो प्रभु सकल जगतकूं पाले ताकूं तू वारवार क्यूं विसरावे ॥ १ ॥ कुटिल अधम पापी ही कहिये, जिनकूं हरि चर्चा नहीं भावें। जिनके पुण्य पुरवले प्रकटे निरन्तर नाम नीरमेंही नहावें। नाम जहाजमें बैठके समझसे नाम अरथमें ही जाय समावे। आवागमन होवे नहीं तुम्हारी,पुरुपारथ सब विध ही पावे ॥ ३ ॥ ओ संसार भ्रम जल है भारी, जामें तूं फिर फिर गोता ही खावे॥ जे गरु खेवट शरणमें जावे कह उत्तम तुमको पार पहुंचावे ॥ ४ ॥ ९ ॥

जोय॥हंस होय हीरा चूणलो थे गुरु गम गाढी गोय॥
नरतन पदारथ पायके रे वृथा अब मत खोय ॥ सु
कहे ये पुकारके अब चेत चेत मत सोय ॥४॥ नवलन
गुरु यूं कह्यो रे जगदीश सबमें जोय ॥ उत्तमनाथ
समजके अब समदृष्टी शीतल होय ॥ ५ ॥ १२

इति श्रीउत्तमनाथजी कृत वाणी समाप्त ।

---

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

१ श्रीनवलनाथेश्वरजीका मंदिर

ठि० सोजतिये दरवाजेके बाहिर

मु० जोधपुर.